उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

MAED-01
शिक्षा के दार्शनिक एवं
समाजशास्त्रीय आधार

खण्ड

4

शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

इकाई-13 5
शिक्षा और समाज

इकाई-14 17
शिक्षा और राष्ट्रीयता

इकाई-15 33
शिक्षा और अन्तर्राष्ट्रीयता

इकाई-16 46
शिक्षा के विज्ञान

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 एस0पी0 गुप्ता	निदेशक, शिक्षा विद्या शाखा, उ0प्र0रा0ट0मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 राम शकल पाण्डेय	पूर्व आचार्य,शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 हरिकेश सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

परिमापक

प्रो0 आर0 एस0 पाण्डेय	अवकाश प्राप्त आचार्य, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सम्पादक

प्रो0 एन0 एन0 पाण्डेय	एम0 जे0 बी0 पी0 विश्वविद्यालय बरेली

लेखक

डॉ0 सुषमा सिंह	वरिष्ठ प्रवक्ता, दीन दयाल उपाध्याय, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से श्री एम0 एल0 कनौजिया, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, जून 2009,

मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

खण्ड – 4 शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

खण्ड परिचय

हमने खण्ड 1, 2, 3 में शिक्षा के दार्शनिक आधार के अन्तर्गत दार्शनिक स्वरूप, विषय क्षेत्र, शिक्षा की अवधारणा एवं कार्य तथा शिक्षा और दर्शन के मध्य सम्बन्ध के विषय में चर्चा की गयी है। इसके अतिरिक्त विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायों प्रकृतिवाद, आदर्शवाद, प्रयोजनवाद, एवं यथार्थवाद तथा अस्तित्ववादी प्रमुख विचारधाराओं, विशेषताओं व शिक्षा के सम्बन्ध में इनके विचारों की जानकारी दी गयी है। यह भी जाना गया की धर्म, जनतन्त्र एवं शैक्षिक मूल्यों के व्यवस्थापन हेतु शिक्षा का स्वरूप कैसा हो और शिक्षा में अनुशासन व स्वतन्त्रता का अपना महत्व है। शिक्षा द्वारा समाज राष्ट्रीयता अन्तर्राष्ट्रीयता तथा विज्ञान के विकास हेतु सुझाव दिये गयें है। इस खण्ड में चार इकाइयां अर्थात इकाई 13 से 16 तक सम्मिलित है।

इकाई–13 में शिक्षा और समाज के अन्योन्याश्रितता, सम्बंध एवं एक–दूसरे पर प्रभावों की चर्चा की गयी है।

इकाई–14 में शिक्षा और राष्ट्रीयता के अन्तर्गत राष्ट्रीयता की अवधारणा को स्पष्ट करते हुये इसकी आवश्यकता की चर्चा की गयी है, इस इकाई में राष्ट्रीयता के विकास हेतु शिक्षा के स्वरूप को प्रस्तुत करते हुये विभिन्न आयोगों के द्वारा राष्ट्रीयता हेतु की गयी सिफारिशों की भी चर्चा की गयी है।

इकाई–15 में शिक्षा और अन्तर्राष्ट्रीयता में अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना के उद्भव के कारणों के साथ इकाई प्रचार–प्रसार हेतु शिक्षा व्यवस्था के स्वरूप के प्रस्तुत किया गया है।

इकाई–16 में शिक्षा में विज्ञान में वैज्ञानिक प्रवृत्ति की अवधारणा को स्पष्ट करते हुये विकास हेतु शिक्षा में विज्ञान विषय के प्रभावकारी शिक्षण हेतु आवश्यक कदम उठाये जाने हेतु भी सुझाव भी दिये हैं।

इस खण्ड के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- समाज और शिक्षा की अन्योन्याश्रितता, प्रभाव एवं सम्बन्धों की विवेचना कर सकेंगे।
- राष्ट्रीयता की अवधारणा को स्पष्ट करते हुये शिक्षा व्यवस्था में इसके व्यवस्थापन हेतु आवश्यक उपाय बता सकेंगे।
- आधुनिक भारत एवं विश्व में अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना की आवश्यकता प्रकाश डालते हुये इसके शिक्षा में विकास हेतु आवश्यक उपायों को सुझा सकेंगे।
- विज्ञान विषयों के अध्ययन की आवश्यकता को बता सकेंगे।
- शिक्षा द्वारा वैज्ञानिक प्रवृत्ति के विकास हेतु आवश्यक उपयोग की व्याख्या कर सकेंगे। आशा है यह खण्ड आपको रोचक एवं बोधगम्य होगा।

इकाई –13 शिक्षा और समाज

संरचना–

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 समाज की संकल्पना

13.4 मानव एवं समाज के सम्बन्ध के सिद्धान्म

13.5 शिक्षा का समाज में स्थान

13.6 समाज के प्रमुख तत्व

13.7 समाज का शिक्षा पर प्रभाव

13.8 शिक्षा का समाज पर प्रभाव

13.9 सारांश

13.10 चर्चा के बिन्दु

13.11 अभ्यास कार्य

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.13 कुछ उपयोगी पुस्तके

13.1 प्रस्तावना

आदिकाल में अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति एवं अस्तित्व के लिये मनुष्य ने समाज की स्थापना की, और अपने सामाजिक सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक परम्पराओं के हस्तांतरण हेतु शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की। फिर कालांतर में शिक्षा समाज के स्वरूप एवं ढांचे पर प्रभाव डालकर परिवर्तन विकास का आधार बनी और फिर समाज के स्वरूप एवं प्रस्थिति ने शिक्षा को भी प्रभावित किया। मानव के विकास की कहानी के साथ शिक्षा भी जुड़ी है। इस इकाई में हम समाज और शिक्षा की अन्योन्याश्रिता के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- समाज एवं शिक्षा की संकल्पना स्पष्ट कर सकेंगे।
- समाज के तत्वों को बता सकेंगे।

- शिक्षा व समाज के सम्बंध का वर्णन कर सकेंगे।
- समाज पर शिक्षा के प्रभाव की विवेचना कर सकेंगे।
- शिक्षा पर समाज के प्रभाव को अख्यायित कर सकेंगे।

13.3 समाज की संकल्पना

मनुष्य चिन्तनशील प्राणी है। मनुष्य ने अपने लम्बे इतिहास में एक संगठन का निर्माण किया है। वह ज्यों–ज्यों मस्तिष्क जैसी अमूल्य शक्ति का प्रयोग करता गया, उसकी जीवन पद्धति बदलती गयी और जीवन पद्धतियों के बदलने से आवश्यकताओं में परिवर्तन हुआ और इन आवश्यकताओं ने मनुष्य को एक सूत्र में बाधना प्रारम्भ किया और इस बंधन से संगठन बने और यही संगठन समाज कहलाये और मनुष्य इन्हीं संगठनों का अंग बनता चला गया। बढ़ती हुई आवश्यकताओं ने मानव को विभिन्न समूहों एवं व्यवसायों को अपनाते हुये विभक्त करते गये और मनुष्य की परस्पर निर्भरता बढ़ी और इसने मजबूत सामाजिक बंधनों को जन्म दिया।

वर्तमान सभ्यता मे मानव का समाज के साथ वही घनिष्ठ सम्बंध हो गया है और शरीर में शरीर के किसी अवयव का होता है। विलियम ईगर महोदय का कथन है– *मानव स्वभाव से ही एक सामाजिक प्राणी है, इसीलिये उसने बहुत वर्षों के अनुभव से यह सीख लिया है कि उसके व्यक्तित्व तथा सामूहिक कार्यों का सम्यक् विकास सामाजिक जीवन द्वारा ही सम्भव है।* रेमण्ट महोदय का कथन है कि– *एकांकी जीवन कोरी कल्पना है।* शिक्षा और समाज के सम्बंध को समझने के लिये इसके अर्थ को समझना आवश्यक है।

❖ **शाब्दिक अर्थ** – समाज शब्द संस्कृत के दो शब्दों सम् एवं अज से बना है। सम् का अर्थ है इक्ट्ठा व एक साथ अज का अर्थ है साथ रहना। इसका अभिप्राय है कि समाज शब्द का अर्थ हुआ एक साथ रहने वाला समूह।

❖ **समाज की परिभाषाये**–

- एडम स्मिथ– *मनुष्य ने पारस्परिक लाभ के निमित्त जो कर्षत्रिम उपाय किया है वह समाज है।*
- डॉ0 जेम्स– *मनुष्य के शान्तिपूर्ण सम्बन्धों की अवस्था का नाम समाज है।*
- प्रो0 गिडिंग्स– *समाज स्वयं एक संघ है, यह एक संगठन है और व्यवहारों का योग है, जिसमें सहयोग देने वाले व्यक्ति एक–दूसरे से सम्बंधित है।*
- प्रो0 मैकाइवर– *समाज का अर्थ मानव द्वारा स्थापित ऐसे सम्बंधों से है, जिन्हें स्थापित करने के लिये उसे विवश होना पड़ता है।*

- ओटवे के अनुसार– *समाज एक प्रकार का समुदाय या समुदाय का भाग है, जिसके सदस्यों को अपने जीवन की विधि की समाजिक चेतना होती है और जिसमें सामान्य उद्देश्यों और मूल्यों के कारण एकता होती है। ये किसी–किसी संगठित ढंग से एक साथ रहने का प्रयास करते हैं किसी भी समाज के सदस्यों की अपने बच्चों का पालन–पोषण करने और शिक्षा देने की निश्चित विधियां होती है।*

संक्षेप में यह कहा जा सकता है, समाज एक उद्देश्यपूर्ण समूह होता है, जो किसी एक क्षेत्र में बनता है, उसके सदस्य एकत्व एवं अपनत्व में बंधे होते हैं।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1– समाज को परिभाषित कीजिये।

....

2– समाज क्यों निर्मित हुये ?

....

13.4 मानव एवं समाज के सम्बन्ध के प्रमुख सिद्धान्त

मानव एवं समाज अन्योन्याश्रित है पर समाजशास्त्री इस सम्बंध के विषय में पृथक–पृथक विचार रखते हैं, इनके विचारों को नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. सामाजिक संविदा का सिद्धान्त–यह अत्यन्त प्राचीन सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त को मानने वाले महाभारत कौटिल्य के अर्थशास्त्र, शुक्रनीतिसार, जैन और बौद्ध साहित्य आदि सभी इस सिद्धान्त का समर्थन करते हैं।

आधुनिक पाश्चात्य् दार्शनिक में टामस हाब्स, लाक और रूसो इस मत का प्रबल समर्थक है। इस सिद्धान्त के अनुसार समाज नैसर्गिक नहीं बल्कि एक कषत्रिम संस्था है। मनुष्यों ने अपने स्वार्थ के लिये समाज का नियंत्रण स्वीकार किया है। इस सिद्धान्त के अनुसार एकांकी जीवन के कठिनाइयों एवं दबंगो के दबाव को झेलते हुये व्यक्ति ने स्वयं को संगठित कर लिया और इन संगठनों को समाज की संज्ञा दी गयी। प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री अरस्तु के कथन को मैकाइवर व पेज ने अपनी रचना सोसाइटी में लिखा कि– *मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य सुरक्षा आराम, पोषण, शिक्षा, उपकरण, अवसर तथा उन विभिन्न सेवाओं के लिये जिन्हें समाज उपलब्ध कराता है, समाज पर निर्भर है।*

2. **समाज का अवयवी सिद्धान्त–** इस सिद्धान्त का अन्तर्निहित अर्थ है समाज एक जीवित शरीर है और मनुष्य उसका अंग है। इस सिद्धान्त के समर्थक मानते हैं कि समाज विभिन्न अंगों में विभाजित है और सभी अंग अपने प्रकार्यों के माध्यम से समाज को जीवन व गति प्रदान करते हैं।

समाज रूपी शरीर में व्यक्ति कोशिका की तरह है, और इसके अन्य अवयव समितियां तथा संस्थायें है। वास्तव में यह सिद्धान्त आज के युग में प्रासांगिक है इसके अनुसार समाज मानव के ऊपर है, यह बात सच है कि मनुष्य समाज का अंग है, और समाज को शरीर मानकर और मनुष्य को कोशिका मानकर मानव अस्तित्व को स्वीकारना ठीक नहीं है। सत्यकेतु विद्यलंकार ने स्पष्ट किया है कि *समाज हमारे स्वभाव में है अतः स्थायित्व उसका स्वभाविक गुण है। शरीर सिद्धान्त के अनुसार समाज में स्वतंत्र रूप से व्यक्तियों की कोई स्थिति नहीं है, जिसे स्वीकारना भी सम्भव नहीं है।*

3. **मनुष्य एवं समाज में आश्रितता–** व्यक्ति व समाज एक–दूसरे के पूरक हैं। व्यक्ति मिलकर समाज का निर्माण करते हैं और समाज व्यक्ति के अस्तित्व एवं आवश्यकता को पूरा करता है, ये दोनों परस्पर आश्रित हैं। व्यक्तियों के योग से समाज उत्पन्न होता है। हैवी हर्स्ट तथा न्यू गार्टन ने अपनी पुस्तक सोसाइटी एण्ड एजुकेशन में समाजीकरण की व्याख्या करते हुये लिखा है *सामाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से बच्चे अपने समाज के स्वीकष्त ढंगों को सीखते है, और इन ढंगों को अपने व्यक्तित्व का एक अंग बना देते हैं।*

सामाजिक संस्था का सदस्य होने के कारण व्यक्ति का व्यक्तित्व एवं अस्तित्व दोनो सुरक्षित रहता है, और व्यक्ति का स्व समाज के स्व के अधीन हो जाता है। स्वस्थ समाज वही है, जो लोकतांत्रिक व्यवस्था में विश्वास करता है समाज में स्वतंत्रता व्यक्ति की उन्नति का आधार बनता है। समाज और व्यक्ति के मध्य अक्सर संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। उसका कारण व्यक्ति की इच्छायें एवं समाज की उससे अपेक्षाये होती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

3–समाज के अवयवी सिद्धान्त की धारण मनुष्य एवं समाज के विषय में क्या है?

....

13.5 समाज के प्रमुख तत्व

समाज के निर्माण के कई तत्व है, इसे जानने के पश्चात् ही समाज का अर्थ पूर्णतया स्पष्ट हो जायेगा–

1– समाज की आत्मा से मनुष्य का अमूर्त सम्बंध है। समाज एक प्रकार से भावना का आधार लेकर बनता है। व्यक्ति समाज के अवयव के रूप में है। व्यक्तियों के बीच की विविधता समाज में समन्वय के रूप में परिलक्षित होती है। कोहरे राबर्टस के अनुसार–*''तनिक सोचने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि समाज के अभाव में व्यक्ति एक खोखली संज्ञा मात्र है। मानव कभी अकेले नहीं रह सकता वह समाज का सदस्य बनकर रह जाता है। मानव का अध्ययन मानव समाज का अध्ययन है, व्यक्ति का विकास समाज में ही सम्भव है।''*

रॉस ने स्पष्ट किया–*''समाज से अलग वैयक्तिकता का कोई मूल्य नहीं रह जाता है और व्यक्तित्व एक अर्थ ही न संज्ञा मात्र है।''*

2– समाज में हम की भावना होती है। इस भावना के अन्तर्गत व्यक्तिगत मैं निहित होता है, और यही सामाजिक बंधन को जन्म देता है। पर समाज के सम्पूर्ण बंधन स्वार्थपूर्ण होते हैं।

3– समाज में समूह मन व समूह आत्मा होती है।, यह सम्बंध पारस्परिक चेतना से युक्त होती है, समूह मन में यह चेतना होती है और उनके यह व्यवहार में प्रकट होती है।

4– समाज में अपनी सुरक्षा की भावना पायी जाती है, इसके लिये वह अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये सदैव प्रयत्नशील रहता है, और समाज अपनी निजता को बनाये रखने के लिये नियम कानून रीति रिवाज संस्कषति व सभ्यता को विकसित व निर्मित करता है।

5– समाज की आर्थिक स्थिति उसके सदस्यों की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है तो उनसे आर्थिक स्थिति की विविधता पायी जाती है परन्तु इन सबके बाद भी उनमें एक समाज अधिकार भावना पायी जाती है, कि हम समाज के सदस्य है।

6– समाज के जीवन एवं संस्कषति सभ्यता के कारण व्यक्तियों के आचार–विचार व्यवहार मान्यताओं में एका पायी जाती है। जिसे हम जीवन का सामान्य तरीका के रूप में देख सकते हैं।

7– समाज निश्चित उद्देश्यों को रखकर निर्मित होते है, जिसमें पारस्परिक लाभ, मैत्रीपूर्ण व शान्तिपूर्ण जीवन आदर्शों एवं कार्यों की पूर्ति आदि के रूप में देखे जा सकते है।

8– समाज में स्थायित्व की भावना होती है क्योंकि सभी सदस्य कई पीढ़ियों से उसी समाज के आजीवन सदस्य रहते हैं, इससे समाज बना रहता है।

9– समाज कई समूहों के संगठन होते है जिनमें अन्योन्याश्रितता होती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी– क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

4. समाज की प्रमुख विशेषता क्या होती है?

....

13.6 शिक्षा का समाज में स्थान

वैंकटरायप्पा ने शिक्षा व समाज के सम्बंध को स्पष्ट करते हुये लिखा है– *''शिक्षा समाज के बालकों का समाजीकरण करके उसकी सेवा करती है। इसका* ***उद्देश्य*** *– युवकों को सामाजिक मूल्यों, विश्वासों और समाज के प्रतिमानों को आत्मासात करने के लिये तैयार करना और उनको समाज की क्रियाओं में भाग लेने के योग्य बनाना है।''* शिक्षा व्यक्ति व समाज के लिये यह कार्य करती है।

- **शिक्षा – व्यक्ति व समाज की प्रक्रिया का आधार** – शिक्षा को चाहे व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया कहें या सामाजिक प्रक्रिया इन दोनों में वह व्यक्ति व समाज से सम्बंध स्थापित करती है। शिक्षा समाज को गतिशील बनाती है, और विकास का आधार प्रदान करती है।
- **समाज के व्यक्तियों का व्यक्तित्व विकास** – शिक्षा द्वारा व्यक्तित्व का विकास होता है। व्यक्तित्व के विकास से तात्पर्य शारीरिक, चारित्रिक, नैतिक और बौद्धिक गुणों के विकास के साथ सामाजिक गुणों का विकास होना। विकसित व्यक्तित्व का बाहुल्य समाज की प्रगति का आधार बनता है। व्यक्ति को निर्जीव मानकर समाज उसका उपयोग नहीं कर सकता।
- **संस्कषति व सभ्यता के हस्तांतरण की प्रक्रिया** – शिक्षा समाज की संस्कषति एवं सभ्यता के हस्तांतरण का आधार बनती है। शिक्षा के इस कार्य के विषय में ओटवे महोदय ने लिखा है कि – *''शिक्षा का कार्य समाज के सांस्कषतिक मूल्यों और व्यवहार के प्रतिमानों को अपने तरूण और शक्तिशाली सदस्यों को प्रदान करना है। पर असल में यह उसके साधारण कार्यो में से एक है।''* शिक्षा के इस कार्य पर टायलर ने लिखा है कि *''संस्कषति वह जटिल समग्रता है, जिसमें ज्ञान विश्वास, कला, नैतिकता, प्रथा तथा अन्य योग्यतायें और आदतें सम्मिलित होती है, जिनको मनुष्य समाज के सदस्य के रूप शिक्षा से प्राप्त करता है।''* महात्मा गांधी ने शिक्षा के इस कार्य की आवश्यकता एवं प्रशंसा करते हुये लिखा है – *''संस्कषति ही मानव जीवन की आधार शिला और मुख्य वस्तु है यह आपके आचरण और व्यक्तिगत व्यवहार*

की छोटी सी छोटी बातों में व्यक्त होनी चाहिये।''

- **शिक्षा सामाजिक प्रक्रिया के अंग के रूप में–** रोसेक के अनुसार– *''शिक्षा एक आधारभूत सामाजिक कार्य और सामाजिक प्रक्रिया का अंग है।''* ओटवे ने शिक्षा को सामाजिक विज्ञान का रूप देते हुये स्पष्ट किया है– *''शिक्षा समाज में होने वाली क्रिया है और इसके उद्देश्य एवं विधियां उस समाज के स्वरूप के रूप के अनुरूप होती है, जिनमें इसकी क्रिया होती है।''*

- **भावी पीढ़ी के प्रशिक्षण–** में शिक्षा समाज को प्रशिक्षित भावी पीढ़ी प्रदान करती है, जो कि समाज का भविष्य होते हैं। ब्राउन लिखते है कि– *''शिक्षा व्यक्ति व समूह के व्यवहार में परिवर्तन लाती है, यह चैतन्य रूप में एक नियंत्रित प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में और व्यक्ति द्वारा समूह में परिवर्तन किये जाते हैं। शिक्षा समाज को सभ्य एवं सुसंस्कष्त पीढ़ी प्रदान करती है।''*

- **शिक्षा समाज की प्रगति का आधार** – शिक्षा समाज के लिये वह साधन है, जिसके द्वारा समाज के मनुष्यों के विचारों, आदर्शों, आदतों और दृष्टिकोण में परिवर्तन कर समाज की प्रगति की जाती है। एलवुड ने स्पष्ट किया है – *''शिक्षा वह साधन है जिसमें समाज सब प्रकार की महत्वपूर्ण सामाजिक प्रगति की आशा कर सकता है।''*

- **समाज में परिर्वतन का आधार–** समाज का स्वरूप एवं प्रस्थिति में निरन्तर बदलाव की ओर अग्रसर होता है, और यह आवश्यक भी नही है, कि यह व्यक्ति और समाज के लिये हितकर हो इसमें शिक्षा इस बदलाव एवं व्यक्ति व समाज के मध्य सम्बधं स्थापित करते हुये सामंजस्य बैठाती है। एलवुड ने स्पष्ट किया है– *''समाज का सर्वोत्तम परिवर्तन मानव के स्वभाव में परिवर्तन कर किया जा सकता है और ऐसा करने की सर्वोत्तम विधि शिक्षा द्वारा ही सम्भव है।''*

- **शिक्षा के द्वारा समाज की स्थिरता –** शिक्षा समाज के मानव संसाधन को सुसंस्कष्त बनाकर अपने व समाज के लिये उपयोग बनाती है। ओर्शिया ने इस तथ्य को स्पष्ट करते हुये कहा है कि *''समाज की शिक्षा व्यवस्था व्यक्तियों का मानसिक, व्यावसायिक, राजनीतिक और कलात्मक विकास करके न केवल समाज के अधोपतन की रक्षा करती है, वरन उसको स्थिरता भी प्रदान करती है।''*

- **सामाजिक दोषों के सुधार का आधार–** शिक्षा में नैतिकता चारित्रिक एवं दार्शनिक पक्ष की प्रधानता होती है और शिक्षा अपनी व्यवस्था में भावी पीढ़ी को समाज में व्याप्त दोषों को इंगित कर उनमें सुधार हेतु समझ एवं मार्ग प्रदान करती है।

- **समाज की सदस्यता की तैयारी का आधार –** शिक्षा व्यक्ति को अपने व समाज के लिये उपयोगी बनाती है, प्रारम्भ में बालक परिवार का सदस्य होता है और उन्हें सामाजिक कर्तव्यों एवं नागरिकता के गुणों को विकसित कर उन्हें समाज के भावी सदस्य के रूप में तैयार करती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी– क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

4–शिक्षा समाज के लिये क्या कार्य करती है?

....

13.7 समाज का शिक्षा पर प्रभाव

शिक्षा पर समाज के प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता है, क्योंकि समाज शिक्षा की व्यवस्था करता है। इस प्रभाव को निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत देखा जा सकता है–

1– **समाज के स्वरूप का प्रभाव –** समाज के स्वरूप का शिक्षा की प्रकृति पर प्रभाव पड़ता है, जैसा समाज का स्वरूप होगा वह शिक्षा को वैसे ही व्यवस्थित करता है। भारत लोकतांत्रिक देश है तो शिक्षा की प्रकृति उद्देश्यों उसके संगठन एवं वातावरण में लोकतांत्रिक आदर्श प्रतीत होते हैं। तानाशाही समाज की शिक्षा में अनुशासन व आज्ञाकारिता, आदि पर बल दिया जाता है। समाजवादी देशों की शिक्षा में समाजवादी तत्व एवं स्वरूप दिखयी देता है।

2– **सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव –** समाज की प्रस्थिति एवं स्वरूप जैसे तैसे बदलता जाता है वैसे वैसे शिक्षा का रूप भी बदलता जाता है। भारत में आदिकाल से धार्मिक शिक्षा दी जाती थी उसके पश्चात् समय के साथ आधुनिक युग आया और देश ने राजतंत्र से प्रजातंत्र में प्रवेश किया और शिक्षा में लोकतंत्रीय आदर्श एवं मूल्य समावेशित हुये सामाजिक असमानता, कुरीतियों एवं आर्थिक असमानता को दूर कर वर्ग विशेष के लिये शिक्षा व्यवस्था से सबके लिये शिक्षा को मुख्य लक्ष्य माना गया और सभी को शिक्षा प्राप्त करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त कराया गया।

3– **राजनैतिक दशाओं का प्रभाव –** किसी भी समजा की राजनैतिक दशा का शिक्षा पर प्रभाव पड़ता है, क्योंकि राजनीति को मजबूत आधार शिक्षा प्रदान करती है। अंग्रेज जब भारत आये तो उन्होनें अपने शासन को मजबूत आधार देने के लिय शिक्षा व्यवस्था को अपने अनुसार ढालने का प्रयास किया और इसके लिये निष्पन्दन का सिद्धान्त का अनुसरण कर आवश्यकतानुसार शिक्षा

देने का प्रयास किया कम्पनी के संचालकों का विश्वास था– कि *''प्रगति उस समय हो सकती है, जब उच्च वर्ग के उन व्यक्तियों को शिक्षा दी जाये जिसके पास अवकाश है।''* वैदिक युग में राजतंत्र था तो शिक्षा वर्ग विशेष के लिये थी परन्तु प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था में सभी आयु वर्ग, लिंग, जाति एवं धर्म के लोगों को समान शिक्षा का अधिकार दिया गया है।

4– **आर्थिक दशाओं का प्रभाव –** जिस समाज की आर्थिक दशा अच्छी होती है वहां की शिक्षा व्यवस्था पर इसका प्रभाव पड़ता है। अमेरिका जैसे देश विकसित हें तो वहां पर शिक्षा का प्रचार–प्रसार जल्दी हुआ और भारत जैसे देश में हमें शिक्षा की सुविधा देने में वर्षों लग रहे हैं। आर्थिक रूप से सम्पन्न समाज अच्छे विद्यालय खोलने में सक्षम रहता है, इसके फलस्वरूप व्यावसायिक, प्राविधिाक, प्रौद्योगिक, वैज्ञानिक आदि पक्षों का अधिक से अधिक विकास हेतु संसाधन उपलब्ध रहता है। आर्थिक रूप से विपन्न देशों व समाजों की शिक्षा में भी यह विपन्नता स्पष्ट दिखायी देती है।

5– **सामाजिक आदर्शो, मूल्यों व आवश्यकताओ का प्रभाव –** शिक्षा पर सामाजिक आदर्शों का प्रभाव पड़ता है जैसे भारत में शिक्षा का स्वरूप पर डा0 राधाकष्ष्णन ने लिखा कि– ''शिक्षा को व्यक्ति और समाज दोनों का उत्थान करना चाहिये। तब हमारी शिक्षा व्यवस्था के उद्देश्यों, लक्ष्यों, शिक्षण विधियों पाठ्यक्रम एवं शिक्षार्थी, शिक्षक के गुणों की संकल्पना पर इसका प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।'' इस प्रकार भारतीय समाज की आवश्यकता है, गरीबी, बेरोजगारी, को दूर करना असमानता की भावना दूर करना, और लोकतांत्रिक मूल्यों का समावेश किया जाये तब इन तथ्यों को शिक्षा व्यवस्था के विभिन्न पक्षों उद्देश्यों एवं पाठ्यक्रम में स्पष्ट समावेशित किया गया।

6– **समाज के दृष्टिकोण का प्रभाव –** शिक्षा व्यवस्था में समाज के दृष्टिकोण का प्रभाव पड़ता है, जैसे यदि समाज रूढ़िवादी दृष्टिकोण का है तो शैक्षिक प्रशासन एवं अनुशासन व पाठ्यक्रम में इसका स्पष्ट छाप दिखायी देती है।समाज के उदार दश्ष्टिकोण का प्रभाव वहॉ की शिक्षा व्यवस्था में देखी जा सकती है। जैसे वैदिक युगीन समाज का दृष्टिकोण आध्यात्मिक था तब उस समय शिक्षा व्यवस्था धार्मिक थी। इसी प्रकार से जनतांत्रिक दृष्टिकोण एंव उदार शिक्षा का प्रभाव शिक्षा व्यवस्था में स्पष्ट दिखायी देता है। एच0ओड का कथन है– *''समाज और शिक्षा का एक दूसरे से पारस्परिक कारण और परिणाम का सम्बंध है। किसी भी समाज का स्वरूप उसकी शिक्षा व्यवस्था के स्वरूप को निर्धारित करता है, और इस व्यवस्था का स्वरूप, समाज के स्वरूप को निर्धारित करता है।''*

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

6– सामाजिक, आर्थिक दशा शिक्षा को कैसे प्रभावित करती है? सोदाहरण प्रस्तुतीकरण कीजिये।

....

13.8 शिक्षा का समाज पर प्रभाव

हम उपर पढ़ चुके हैं कि समाज शिक्षा के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करता है तो ठीक उसी प्रकार शिक्षा भी समाज को प्रत्येक पक्ष पर प्रभावित करती है, चाहे आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कषतिक स्वरूप हो। इस पर हम बिन्दुवार आगे कुछ विस्तार से देखेंगे–

- शिक्षा व समाज का स्वरूप – शिक्षा का प्रारूप समाज के स्वरू‍ को बदल देती है क्योंकि शिक्षा परिवर्तन का साधन है। समाज प्राचीनकाल से आत तक निरन्तर विकसित एवं परिवर्तित होता चला आ रहा है क्योंकि जैसे–जैसे शिक्षा का प्रचार–प्रसार होता गया इसने समाज में व्यक्तियों के प्रस्थिति, दृष्टिकोण , रहन–सहन, खान–पान, रीति–रिवाजों पर असर डाला और इससे सम्पूर्ण समाज का स्वरूप बदला।
- शिक्षा व सामाजिक सुधार एवं प्रगति– शिक्षा समाज के व्यक्तियों को इस योग्य बनाती है कि वह समाज में व्याप्त समस्याओं, कुरीतियों गलत परम्पराओं के प्रति सचेत होकर उसकी आलोचना करते है, और धीरे–धीरे समाज में परिवर्तन होता जाता है। शिक्षा समाज के प्रति लोगों को जागरूक बनाते हुये उसमें प्रगति का आधार बनाती है। जैसे शिक्षा पूर्व में वर्ग विशेष का अधिकार थी जिससे कि समाज का रूप व स्तर अलग तरीके का या अत्यधिक धार्मिक कट्टरता, रूढिवादिता एवं भेदभाव या कालान्तर में शिक्षा समाज के सभी वर्गों के लिये अनिवार्य बनी जिससे कि स्वतंत्रता के पश्चात् सामाजिक प्रगति एवं सुधार स्पष्ट परिलक्षित हो रहा है। डयूवी ने लिखा है कि– शिक्षा में अनिश्चितता और अल्पतम साधनों द्वारा सामाजिक और संस्थागत उद्देश्यों के साथ–साथ, समाज के कल्याण, प्रगति और सुधार में रूचि का दुषित होना पाया जाता है।
- शिक्षा और सामाजिक नियंत्रण– शिक्षा समाज का स्वरूप बदलकर उस पर नियंत्रण भी करती है अभिप्राय यह है कि व्यक्ति का दृष्टिकोण एवं उसके

क्रियाकलाप समाज को गतिशील रखते हैं। शिक्षा व्यक्ति के दृष्टिकोण में परिवर्तन कर उसके क्रियाकलापों में परिवर्तन कर समूह मन का निर्माण करती है और इससे अत्यव्यवस्था दूर कर उपयुक्त सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करती है।

- शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन– समाज की रचना मनुष्य ने की है, और समाज का आधार मानव क्रिया है ये– अन्तः क्रिया सदैव चलती रहेगी और शिक्षा की क्रिया के अन्तर्गत होती है इसीलिये शिक्षा व्यवस्था जहां समाज से प्रभावित होती है वहीं समाज को परिवर्तित भी करती है जैसे कि स्वतंत्रता के पश्चात् सबके लिये शिक्षा एवं समानता के लिये शिक्षा हमारे मुख्य लक्ष्य रहे हैं इससे शिक्षा का प्रचार–प्रसार हुआ और समाज का पुराना ढांचा परिवर्तन होने लगा। आध्यात्मिक मूल्यों के स्थान पर भौतिक मूल्य अधिक लोकप्रिय हुआ। सादा जीवन उच्च विचार स`अब हर वर्ग अपनी इच्छाओं के अनुरूप जीना चाहता है। शिक्षा ने जातिगत व लैंगिक असमानता को काफी हद तक दूर करने काप्रयास किया। और ग्रामीण समाज अब शहरी समाजों में बदलने लगे और सामूहिक परिवारों का चलन कम हो रहा है। शिक्षा के द्वारा सामाजिक परिवर्तन और इसके द्वारा शिक्षा पर प्रभाव दोनों ही तथ्य अपने स्थान पर स्पष्ट है। सैयदेन ने इस बात को और स्पष्ट करते हुये लिखा है कि– इस समय भारत में शिक्षा बहुत नाजुक पर रोचक अवस्था में से होकर गुजर रही है, यह स्वाभाविक है क्योंकि समग्र रूप में राष्ट्रीय जीवन भी जिसका शिक्षा भी अनिवार्य अंग है, ऐसी ही अवस्था में से होकर गुजर हरा है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी– क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

7–शिक्षा और समाजिक परिवर्तन की अन्योन्याश्रिता स्पष्ट कीजिये?

....

13.9 सारांश

यह निर्विवाद सत्य है कि व्यक्ति का समाज के बिना कोई अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। रॉस ने यहां पर स्पष्ट किया कि– समाज से अलग वैयक्तिकता का कोई मूल्य नहीं रह जाता है और व्यक्तित्व का कोई मूल्य नहीं रह जाता है। वास्तव में समाज और व्यक्ति अपने–अपने अस्तित्व के लिये परस्पर निर्भर है, और शिक्षा इसमें मुख्य भूमिका निभाने वाली प्रक्रिया है समाज अपने अस्तित्व को बचाने और विकास

करने के लिये शिक्षा को आधार बनाता है। ओटवे ने इस तथ्य को स्पष्ट करते हुये लिखा – किसी भी समाज में दी जाने वाली शिक्षा समय–समय पर उसी प्रकार बदलती है जिस प्रकार समाज बदलता है। स्पेन्सर ने शिक्षा और समाज के सम्बंध को स्पष्ट करते हुये लिखा कि– प्राचीन कालीन शिक्षा प्रणाली अपनी समकालीन सामाजिक पद्धतियों के अनुरूप थी और उसी प्रकार हमारी शिक्षा की आधुनिक प्रणालियां हमारी अधिक, धार्मिक और राजनैतिक संस्थाओं के अनुरूप है।

13.10 चर्चा के बिन्दु

''विभिन्न प्रकार के समाजों में प्रदान की जाने वाली शिक्षा विभिन्न होती है।'' उदाहरण सहित इस तथ्य की चर्चा कीजिये किस प्रकार शिक्षा और समाज अन्योन्याश्रित है।

13.11 अभ्यास कार्य

1. व्यक्ति समाज और शिक्षा के आपसी सम्बंधों पर प्रकाश डालिये।
2. शिक्षा का समाज पर और समाज का शिक्षा पर प्रभावों की विवेचना कीजिये।

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. समाज मनुष्यों का उद्देश्यपूर्ण संगठन है।
2. पारस्परिक निर्भरता, एकाकीपन और स्वयं सुरक्षा के लियें।
3. समाज जीवित शरीर और मानव उसका अवयव।
4. सामाजिक प्रक्रिया प्रगति का आधार, सामाजिक परिवर्तन का कारण, सामाजिक दोषों में सुधार।
5. आर्थिक दशा का शिक्षा के सभी संसाध्नों पर प्रभाव।
6. समाज के परिवर्तन से शिक्षा परिवर्तित और शिक्षा के परिवर्तन से समाज परिवर्तित।

13.14 कुछ उपयोगी प्रस्तकें

डा0 जयसवाल एस0 (1996)	:	शिक्षा का सामाजिक आधार प्रकाशन केन्द्र, सीतापुर रोड,लखनऊ।
Saiyidian, G.K,(1957)	:	Education, Culture and Social Order, Bombay: Asia Publishing house.
Brookover W.V.	:	Sociology of Education, Newyork: American Book Co.
Brown Francis J. (1954)	:	Educational Sociology New York, American Book Co.

इकाई–14 शिक्षा और राष्ट्रीयता

संरचना

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 राष्ट्रीयता की संकल्पना

14.4 राष्ट्रीयता के गुण

14.5 राष्ट्रीयता में बाधक तत्व

14.6 राष्ट्रीयता एवं शिक्षा

14.7 भारत के संदर्भ में राष्ट्रीयता एवं शिक्षा

14.8 भारत में राष्ट्रीयता के विकास का उपाय एवं शिक्षा

14.9 राष्ट्रीय एकता हेतु शैक्षिक कार्यक्रम

14.10 सारांश

14.11 चर्चा के बिन्दु

14.12 अभ्यास कार्य

14.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

वर्तमान युग राष्ट्रीयता का युग है, और संसार का कोई भी प्रकार का राजनैतिक ढांचा अपने नागरिकों के राष्ट्र प्रेम पर निर्भर करता है। नागरिकों व निवासियों की राष्ट्र के प्रति भक्ति ही राष्ट्रीयता है जो कि उस देश की सीमा का सीमांकन करती है, और रक्षा करती है। अब संसार के सभी देश राष्ट्रीयता की शिक्षा पर विशेष बल दे रहे हैं, और राष्ट्रीयता की शिक्षा एक महत्वपूर्ण दायित्व है क्योंकि इस शिक्षा का सम्बंध राष्ट्र के अस्मिता से है और अस्तित्व से है। इस इकाई में हम राष्ट्रीयता की संकल्पना के साथ इसके विकास में बाधक तत्वों की भी चर्चा करेंगे और इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय एकता के लिये आवश्यक शैक्षिक कार्यक्रमों की भी चर्चा करेंगे।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- राष्ट्रीयता की संकल्पना को समझकर वर्णित कर सकें।

- राष्ट्रीयता के प्रकार एवं गुणों की विवेचना कर सकेंगे।
- राष्ट्रीयता के विकास में बाधक तत्वों को इंगित कर सकेंगे।
- राष्ट्रीयता के विकास में शिक्षा की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे।
- भारत के संदर्भ में राष्ट्रीयता एवं शिक्षा को स्पष्ट कर सकेंगे।
- भारत में राष्ट्रीयता के विकास हेतु विभिन्न आयोगों व समितियों के संस्तुतियों को बता सकेंगे।

14.3 राष्ट्रीयता की संकल्पना

वर्तमान युग राष्ट्रीयता का युग माना जाता है। सभी देश अपने निवासियों में राष्ट्रीयता की भावना पर निर्भरत करते हैं, और यह प्रयास करते है कि शिक्षा विद्यार्थियों में राष्ट्रीयता को प्रफुल्लित करें और उसके विकास में सहायक हो। राष्ट्रीयता देश के सभी नागरिकों में हम और हमारा का दृष्टिकोण उत्पन्न कर देता है और यह सबको एक सूत्र में बांधे रहता है।किसी भी राष्ट्र में भिन्न क्षेत्रों भाषा जाति धर्म व संस्कषति के लोग रहते है, परन्तु इतने विभिन्नता के होते हुये भी किसी राष्ट्र के व्यक्ति समान हित की भावना से जुड़े होते हैं और सभी व्यक्तियों के इन समान हितों की रक्षा के लिये राज्य उत्तरदायी होता है और यह व्यक्ति को व्यक्तिगत हितों से ऊपर राष्ट्र के हितों को रखने पर ही सम्भव हो पाता है। राष्ट्रीयता में मूल शब्द राष्ट्र है, और ईयता प्रत्यय लगा है और इसका अभिप्राय है राष्ट्र के प्रति लगाव। राष्ट्रीयता की व्याख्या विभिन्न प्रकार से की गयी है और इसे मन की स्थिति तथा आत्मा की सम्पत्ति मानते हैं। यह भावना जीवन एवं विचार की पद्धति के रूप मे ंभी मानी जाती हैं। ब्रुवेकर के द्वारा राष्ट्रीयता की निम्न परिभाषा दी गयी– *''राष्ट्रीयता साधारण रूप से देश प्रेम की अपेक्षा देश भक्ति के अधिक व्यापक क्षेत्र की ओर संकेत करती है। राष्ट्रीयता में स्थान के सम्बन्ध के अलावा, प्रजाति, भाषा, इतिहास, संस्कषति और परम्पराओं के भी सम्बंध आ जाते हैं।''*

उपरोक्त परिभाषा यह स्पष्ट करती है कि राष्ट्रीयता किसी भी राष्ट्र के व्यक्तियों के मध्य एका की भावना होती है, इसमें देशप्रेम, देशभक्ति व देश के प्रति समर्पण की भावना छिपी रहती है और राष्ट्र हित की भावना के आगे वैयक्तिक व सामूहिक हितों को त्याग का प्रवृत्ति पायी जाती है, यही भावना राष्ट्रीयता कहलाती हैं।

राष्ट्रीयता के प्रकार – राष्ट्रीयता दो रूपों में परिलक्षित होती है–

1. संकीर्ण राष्ट्रीयता 2. उदार राष्ट्रीयता

1. **संकीर्ण राष्ट्रीयता** – इस प्रकार की राष्ट्रीयता में व्यक्तियों में यह धारणा विकसित होती है कि मेरा ही राष्ट्र सर्वश्रेष्ठ है और वह संसार के अन्य देशों को

अपनी राष्ट्र से पीछे व कमतर समझते हैं। यह राष्ट्र के प्रेम की सभी हदों के पार के विश्वास की बात मानते हैं, परन्तु इसमें व्यक्तिगत एवं सामाजिक हित पीछे रह जाते हैं। संकुचित राष्ट्रवाद ने संसार में कई उथल–पुथल मचाया है इसके कारण–

- अन्तराष्ट्रीय विचारधारा पनप नहीं पाती और यह मानव हित के लिये घातक है।
- संकुचित राष्ट्रीयता की भावना उस राष्ट्र एवं नागरिक को स्वार्थी बना देता है, और दूसरे देशों के प्रति घष्णा उत्पन्न करती है और यह आपसी संघर्ष उत्पन्न करता है।
- संकुचित राष्ट्रीयता की भावना पड़ोसी देशों की भी परवाह नहीं कर आपसी तनाव बढ़ाती है जिससे कि दोनां देश उन्नति नहीं कर पाते। यह विश्व के अस्तित्व के लिये भी खतरा उत्पन्न करती है।
- यह वैयक्तिक हितों के विपरीत है। इसमें सामान्य व्यक्ति का विकास अधि ाकांशतः उपेक्षित भी हो सकता है और यह व्यक्तियों पर दबाव बनाती है।

2. **उदार राष्ट्रीयता –** यह राष्ट्रीयता व्यक्तियों को स्वेच्छा से अपने राष्ट्र को प्रेम करने के लिये प्रेरित करती है। यह अपने राष्ट्र से प्रेम करने के साथ अन्य देशों के साथ घष्णा करने की आज्ञा नहीं देता, यह समवेत विकास में विश्वास करती है। इस प्रकार की राष्ट्रीयता धर्मो जातियों और भाषाओं के लोगों में पारस्परिक सहिष्णुता की भावना को जन्म देती है। इस प्रकार की राष्ट्रीयता राष्ट्र के निवासियों को बाह्य बंधन से मुक्त होने और रहने की प्रेरणा देती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजियें।

1– राष्ट्रीयता से आपका क्या अभिप्राय है?

2– संकुचित राष्ट्रीयता के क्या दोष है?

14.4 राष्ट्रीयता के गुण

किसी भी राष्ट्र का अस्तित्व वहां के निवासी के हम की भावना पर निर्भरत करती है क्योंकि यह किसी भी राष्ट्र के नागरिकों को एक सूत्र में बांधती है। राष्ट्रीयता के गुणों की चर्चा अब हम कर रहे हैं–

- राष्ट्रीयता किसी देश के नागरिकों को एक सूत्र में बांध देती है, इसमें स्थान, जाति, भाषा, संस्कषति आदि के आधार पर भिन्नता होते हुये भी एकता स्थापित हो जाती है।

- यह नागरिकों को अपने स्वार्थों से ऊपर राष्ट्र के हित को रखने के लिये प्रेरित करता है।
- यह राष्ट्र को उसकी सीमाओं में बांधे रखता है।
- राष्ट्रीयता व्यक्तियों को राष्ट्र के प्रति प्रेम होने के कारण अनुशासन स्थापन के लिये प्रेरित करती है।
- उदार राष्ट्रीयता राष्ट्र के उन्नति के साथ व्यक्तियों के अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति भी सचेत रहती है।
- राष्ट्रीयता नागरिकों को अपने राष्ट्र के उन्नति एवं विकास हेतु संचेतना जागष्त करती है।
- उदार राष्ट्रीयता नागरिकों में अन्तर्राष्ट्रीय जागरूकता की भावना विकासित करने में सहायक होती है।
- उदार राष्ट्रीयता वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना में विश्वास करती है।
- किसी भी प्रकार की राजनैतिक व्यवस्था तानाशाही, साम्यवादी, समाजवादी और प्रजातंत्रीय व्यवस्था को दष्ढ़ बनाये रखने के लिये वहां के नागरिकों में राष्ट्रीयता की भावना आवश्यक होती है।
- राष्ट्रीयता राष्ट्रों के मध्य होड़ एवं संघर्ष भी उत्पन्न कर सकती है, और राष्ट्र एक–दूसरे से आगे निकलने के लिये संघर्ष करते हैं।

राष्ट्रीयता की कमियां– राष्ट्रीयता की भावना उदारवादी हो यह आवश्यक है, उसके संकुचित रूप न उभरे इसी कमी को इंगित करते हुये जवाहर लाल नेहरू ने लिखा था– *''राष्ट्रीयता एक ऐसा विचित्र तत्व है जो एक देश के इतिहास में जहां जीवन मानव शक्ति में एकता का संचार करता है,वहां संकुचित बनाता है, क्योंकि इसके कारण एक व्यक्ति अपने देश के बारे में संसार के अन्य देशों से पृथक–पृथक रूप में सोचता है।''* इस रूप में स्पष्ट परिलक्षित हो रहा है कि –

1– राष्ट्रीयता के गुण व्यक्तियों को एक सूत्र में बांधने के साथ यह दुर्गुण पैदा करती है कि मेरा राष्ट्र अन्य राष्ट्रों से श्रेष्ठ है।

2– यह राष्ट्र की सीमाओं को सुरक्षित रखने के लिये प्रेरित करती है परन्तु अन्ध ाधुन्ध प्रेम दूसरे राष्ट्र की सीमाओं को भंग कर अपने राष्ट्र की सीमाओं के प्रसार करने के लिये भी अग्रसर करती है।

3– राष्ट्रीयता अपने देश की अस्मिता एवं अस्तित्व को बचाने के लिये प्रेरित करती है, तो दूसरी ओर दूसरे देश को आगे बढ़ते देखकर उसकी अस्मिता व अस्तित्व को भंग करने के लिये अभिप्रेरित करती है।

4– अंधी राष्ट्रीयता अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को भी प्रभावित करती है। देश आपस में

सहयोग लेना–देना नहीं चाहते है।

5– राष्ट्रीयता की भावना का संघर्ष अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में बाधक होता है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजियें।

3. 'राष्ट्रीयता की भावना' क्यों आवश्यक है ?

....

4. अन्धी राष्ट्रीयता क्यो घातक होती है ?

....

14.5 राष्ट्रीयता में बाधक तत्व

किसी भी राष्ट्र के नागरिकों में राष्ट्रीयता की भावना उस राष्ट्र के लिये प्राण वायु के समान है। क्योंकि राष्ट्र किसी भूमि से नहीं किसी निश्चित भूभाग में रहने वाले एक समान सोच वाले लोगों से बनती है, जिसे सभी लोग मिलकर एक राष्ट्र का नाम देते हैं। परन्तु कुछ निश्चित तत्व राष्ट्रीयता के विकास में बाधक होते हैं, क्योंकि शिक्षा को इन्हीं तत्वों से जूझना पड़ता है ताकि राष्ट्रीयता की भावना का समुचित विकास हो सके।

(1) **साम्प्रदायिकता–** जब कोई भी देश जैसे कि भारत विभिन्न धर्म के लोगों से बसा होता है, तब लोग अपने धर्म को सर्वोपरि मानते हुये दूसरे सम्प्रदाय के लोगों से बहुधा मानसिक रूप से नहीं जुड़ पाते हैं, इससे अप्रत्यक्ष रूप में राष्ट्र के लोग साम्प्रदायिक गुटों में बंटे रहते हैं और सम्प्रदाय को राष्ट्र से भी ऊपर मानने लगते हैं, तब समस्या और जटिल हो जाती है। सर्वपल्ली राधाकष्णन ने साम्प्रदायिकता एवं राष्ट्रीयता के सम्बंध को स्पष्ट करते हुये लिखा कि –*"आखिर धर्म क्या है? समाज को धारण करे, समाज को बनाये रखता है, वहीं धर्म है जो धर्म समाज को विभाजित करता है वह समाज में फूट डालता है, मतभेद पैदा करता है, घष्णा व द्वेष फैलाता है, वह अर्धम है।"*

(2) **भाषावाद–** किसी देश में विभिन्न भाषा–भाषी लोगों का निवास उस देश में राष्ट्रीयता की भावना के विकास में बाधक तत्व है, क्योंकि भारत जैसे देश में जब प्रदेशों का बंटवारा भाषा के आधार पर हुआ तब लोगों की निष्ठा अपने भाषा

के प्रति अधिक बढ़ी और फलस्वरूप राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने वाली 'हिन्दी भाषा' जो कि राष्ट्र भाषा भी हैं, वह आज उपेक्षित है, और अधिकांश लोगों द्वारा प्रयोग में नही लायी जा रही है। अब तो यहां तक देखने में आता है, कि अहिन्दी भाषा राज्य हिन्दी का विरोध कर बंटे हुये है।

(3) **क्षेत्रीयता–** जब राष्ट्र अनेक राज्यों में बंटा होता है, तब सम्पूर्ण राष्ट्र पहले {ात्रीयता के आधार पर बट जाता है। किसी भी देश में राष्ट्र, राष्ट्रीयता की भावना के विकास में क्षेत्रीय कट्टरता भी एक बाधक तत्व है। क्षेत्रीयता का भारत जैसे देश में प्रभाव पर डॉ0 सम्पूर्णानन्दन ने टिप्पणी करते हुये लिखा कि– *''आज दक्षिण भारत के लोगों के मुँह से सुनने में आती है, कि हम हिन्दुस्तान से अलग होना चाहते हैं, पर जो धनाढ्य हैं वे सोचते है कि क्या अपने आजादी व सम्पत्ति की रक्षा कर सकेंगे। क्या तमिलनाडू वाले अलग होकर अपनी अधिक रक्षा कर सकते हैं। वह ऐसा करके अपने को भी डुबोयेंगे और दूसरों को भी ले डूबेंगे। इसलिये ऐसा सेचना बड़ी भयानक चीज है।''*

(4) **जातिवाद–** समाज का जातीय विखण्डन लोगों के हष्दय को जोड़ नहीं पाया और इसने पूरे समाज को द्वेषपूर्ण बना दिया। ऊँच–नीच के भेदभाव ने हष्दय को इतना कलुषित किया है कि समाज समवेत सुख व दुख में खड़ा नहीं हो पाता है तो राष्ट्र के लिये कैसे खड़ा होगा। भारत जैसे देश की यह सत्य कहानी है, इस दर्द को जवाहर लाल नेहरू ने इस प्रकार व्यक्त किया कि– *''मैं समझता हूँ कि भारत को एक मानने में सबसे खराब चीज यहां की जाति प्रथा है। हम आप बहस करते हैं, कभी जनतंत्र की, प्रजातंत्र की, समाजवाद की और किस किस की। इन सबमें चाहे जो लाजमी हो पर उसमें जाति प्रथा नहीं आ सकती क्योंकि यह राष्ट्र की हर तरक्की के प्रतिकूल है। जात–पात में रहते हुये न हम समाजवाद, न ही प्रजातंत्र को पा सकते हैं। यह प्रथा तो देश और समाजवाद को टुकड़े कर ऊपर नीचे और अलग–अलग भागो में बांटती है इस तरह वह बांटने का कार्य करती है और अब जाति प्रथा पुरानी व हानिकारक हो गयी।''* आज हमारे देश की राजनीति का आधार जातिवाद है।

(5) **रंगभेद–** यह भेद ऐसा है, जिसने एक राष्ट्र को ही नही विश्व को दो खण्डों में बांटा श्वेत एवं अश्वेत। कई देशों में सम्पूर्ण राजनीति इसको आधार बनाकर की जाती है। अमेरिका, अफ्रीका आदि ऐसे ही देश है। रंगभेद ने इन राष्ट्रों को दो खण्डों मे बांट रखा है, जिससे कि लोगों का हृदय आपस में नहीं मिलता लोगों के लिये राष्ट्र से ऊपर प्रजाति है।

(6) **दूषित शिक्षा प्रणाली** – राष्ट्रीयता की भावना का प्रचार–प्रसार न होने के कारण में दूषित शिक्षा प्रणाली भी एक प्रमुख भूमिका निभाती है। पाठ्यक्रम में राष्ट्रीयता के विकास करने वाले तत्व कम पाये जाते हैं। भारत जैसे प्रजातंत्र में प्रजातांत्रिक मूल्यों एवं राष्ट्रीयता की भावना के विकास का दायित्व शिक्षा

को ही सौंपा गया है, परन्तु शिक्षा का उचित प्रचार–प्रसार भी अभी संतोषजनक स्तर तक नहीं हो पाया है, और शिक्षा में राष्ट्रीयता के तत्वों को भी समावेशित नहीं किया गया है।

(7) **नैतिक पतन एवं भ्रष्टाचार–** किसी भी समाज में अनुशासनहीनता, कर्तव्यहीनता, अधिकारों का अधिक प्रयोग, उत्तरादयित्वों के प्रति उदासीनता निष्ठा की कमी भौतिकवादी दृष्टिकोण राष्ट्रीयता की भावना के उद्‌भव में बाधक तत्व है, क्योंकि नागरिकों का नैतिक उत्थान एवं सच्चरित्रता ही देश की उन्नति का आधार होती है।

(8) **दूषित राजनीति–** भारत सहित अधिकांश देशो की राजनीति में अब स्वच्छता नहीं रह गयी है, और राजनीति झूठ, फरेब, धोखा, गुमराह, भ्रष्टाचार व देश के ऊपर अपने स्वार्थों के प्रति भूख का पर्याय बन चुकी है। राजनितिज्ञ साम्प्रदायिकता, क्षेत्रवाद, भाषावाद, जातिवाद एवं रंगभेद को ही अपनी राजनीति का आधार बनाते हैं। राजनितिज्ञ अपने स्वार्थ पूर्ति हेतु देश को जोड़ते नहीं तोड़ते हैं। इस प्रकार से यह स्पष्ट हो जाता है कि अनेक कारक राष्ट्रीयता के विकास में बाध ाक है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजियें।

5– 'भाषावाद' राष्ट्रीयता के विकास में बाधक है? कैसे।

....

6– भारत में राष्ट्रीयता के विकास में बाधक तत्वों की सूची बताइये?

....

14.6 राष्ट्रीयता एवं शिक्षा

किसी भी देश की प्रगति और उत्थान के लिये उस देश की शिक्षा व्यवस्था को ही मुख्य कार्य करना पड़ता है, क्योंकि शिक्षा ही राष्ट्रीयता के लिये मस्तिष्क को प्रशिक्षित कर सकती है। बच्चों को प्रारम्भ से ही राष्ट्रीयता के लिये सुशिक्षित कर दिया जाय तो शिक्षा इसके लिये आवश्यक होगी, क्योंकि शिक्षा व साधन है, जिसके द्वारा समाज का देश में राष्ट्रीय चेतना का विकास कर उसे मूलरूप से बदला जा सकता है। प्राचीन काल में स्पार्टा की शिक्षा इसका प्रमुख उदाहरण है और शिक्षा के प्रमुख कार्य की ओर इंगित करते हुये एच0मैन का कथन है–*''केवल शिक्षा से ही हमारी राजनैतिक सुरक्षा सम्भव है।''* किसी भी राष्ट्र का अस्तित्व वहां के नागरिकों पर निर्भर करता है।

मैकाइवर ने इस ओर इंगित करते हुये लिखा कि– *''राष्ट्र का गुण उसकी सामाजिक इकाईयों का गुण है। अर्थात् सामाजिक इकाइयों का सामूहिक जीवन ही राष्ट्रीय जीवन है। यदि ईंधन ही खराब हो तो ज्योति कैसे तेल हो सकती है– अर्थात् यदि सामाजिक इकाइयां निर्बल हैं, तो राष्ट्र कैसे देदीप्यवान हो सकता हैं।''* प्लेटो ने शिक्षा की आवश्यकता को उद्‌धष्त करते हुये कहा था कि– *''राज्य के संरक्षक– दार्शनिक, उत्साही, तीव्रगामी और बलवान होने चाहिये और शिक्षा को इसमें सहयोग देना होगा।''*

राष्ट्रीयता का उचित विकास एक बहुत बड़ा दायित्व है जो कि शिक्षा व्यवस्था के कारण ही पूरा किया जा सकता है डॉ0 जाकिर हुसैन ने इस तथ्य को उभारते हुये लिखा कि– *''प्रजातंत्र की सफलता व्यक्तिगत पहल कदमी पर न कि ऊपर से दिये जाने वाले निर्देश पर आधारित है राज्य का एक सबसे कठिन कार्य प्रत्येक नागरिक में सामान्य राष्ट्रीय स्वभाव का विकास करना है।''* राष्ट्रीयता हेतु शिक्षा के लिये निम्न उपाय किये जा सकते है।

- शिक्षा के सभी स्तर के पाठ्‌यक्रम में क्रमशः राष्ट्रीय एवं भावात्मक एकता से सम्बंधित तथ्य सम्मिलित किये जाये।
- पाठ्‌यक्रम में सभी धर्मों के आवश्यक आदर्श सम्मिलित व धार्मिक सहिष्णुता की भावना उत्पन्न की जाये जिससे कि साम्प्रदायिकता के कुप्रभाव से राष्ट्रीयता की भावना कुंठित न हो।
- विद्यार्थियों में जातिगत, आर्थिक एवं क्षेत्रवाद के विरूद्ध उचित दृष्टिकोण उत्पन्न करने हेतु पाठ्‌यवस्तु मे ंउचित तथ्य सम्मिलित किये जाये।
- सभी स्तर की शिक्षा की मुख्य भाषा हिन्दी को बनाया जाये और इसे प्रत्येक प्रान्त में अनिवार्य भी बना दी जाये।
- शिक्षा में पाठ्‌यसहगामी क्रियाकलापों को अनिवार्य रूप में सम्मिलित किया जाये जिससे कि विद्यार्थियों में उच्च सामाजिक एवं मानवीय गुणों का विकास हो।
- शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर राष्ट्रगान, राष्ट्रीय कवितायें एवं राष्ट्रीय मूल्यों को समावेशित किया जाये।
- माध्यमिक स्तर एवं उच्च स्तर की शिक्षा में भावात्मक एकता के लिये सामाजिक विषयों में विभिन्न महान दार्शनिकों समाज सुधारकों, देशभक्तों से सम्बंधित तथ्य सम्मिलित किये जाये।
- राष्ट्रीय त्यौहारों को धूमधाम से सभी स्तर के विद्यालयों में मनाया जाये। जिससे कि राष्ट्रीयता एवं भावात्मक एकता की भावना सुदष्ढ़ हो।
- राष्ट्रीयता एवं भावात्मक एकता की भावना के प्रचार–प्रसार हेतु जनसंचार के माध यमों का प्रयोग कर जन–जन में इसका प्रचार–प्रसार किया जाये।
- सम्पूर्ण देश में एक जैसा पाठ्‌यक्रम हो।
- सम्पूर्ण देश में एक जैसी शिक्षा का प्रचार–प्रसार का प्रयास किया जाये।

- शिक्षा के किसी स्तर पर भी विशेष जातिगत लैंगिक सम्प्रदाय एवं क्षेत्रवाद से सम्बंधित तथ्यों को सम्मिलित कर प्रश्रय न दिया जाये, और किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिये।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

7–राष्ट्रीयता के विकास में शिक्षा की क्या भूमिका हो सकती है? समझाइये।

....

14.7 राष्ट्रीयता एवं शिक्षा भारत के परिप्रेक्ष्य में

भारत एक धर्म सहिष्णु समाजवादी विशाल लोकतंत्र है, परन्तु एक विशेष विशिष्टता इसके अनेक धर्म अनेक धर्मगत जातियां, अनेक भाषाओं का होना है और यही इसके राष्ट्रीय भावना के विकास में बाधक है। भारत इन विभिन्नताओं के साथ ही आगे बढने का प्रयास तेजी से कर रहा है। हमारे इस विकास की गति में भी हमारी राष्ट्रीयता की भावना की आवश्यकता अधिक है। सर्वप्रथम इसे जानना चाहिये कि भारत में राष्ट्रीयता की भावना के विकास में हमारे समक्ष कौन सी चुनौतियां है–

- **दूषित राजनीति–** भारत में विभिन्न जाति धर्म के लोग आदि काल से ही एक साथ रहते आये परन्तु उनमें संघर्ष भावात्मक रूप से अब अधिक प्रतीत होता है, क्योंकि देश के संविधान में समुदाय विशेष, वर्ग विशेष को अधिक सुविधा देकर आत्मा से ही समाज को बांट दिया जैसे कि वर्तमान समय में सरकार किसी एक वर्ग विशेष को संतष्त करने के फिराक में रहती है तो दूसरे वर्ग इसके कारण असंतुष्ट हुये। दलगत राजनीति अपने स्वार्थ के कारण समाज को भौतिक एवं मानसिक रूप से बांटने का काम कर रही हैं।

- **संवैधानिक त्रुटि–** हमारे संविधान में कुछ तथ्य ऐसे है सम्मिलित है जिन्होनें देश को जोड़ा नहीं तोड़ा जैसे राज्य, स्थान, जाति, लिंग व धर्म आदि किसी भी आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं करेगा और दूसरी ओर धर्म के आधार पर बहुसंख्यक एवं अल्पसंख्यक का दर्जा देकर साम्प्रदायिक तनाव को जन्म दिया। यह हमारे देश के अतिरिक्त विश्व के किसी देश में नहीं है। इसी प्रकार जातिगत प्रश्रय देना भी भारतीय समाज की एकता के लिये बाधक है।

- **आर्थिकत विषमता–** भारत में गरीबी भी एक प्रमुख समस्या है। समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग करीब 30 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जी रही है। अतः यह जनसंख्या पूरी जीवन अपने मूल आवश्यकताओं को भी नहीं जुटा पाती है तो फिर इनसे राष्ट्र व समाज के प्रति प्रेम की भावना कठिन है, और अमीर व

गरीब की खाई मानसिक दूरी भी बढ़ाती है।

- **अत्यधिक जनसंख्या–** भारत संसार में जनसंख्या की दषष्टि से दूसरा बड़ा देश है, परन्तु वषद्धि दर को देखते हुये यह प्रतीत होता है कि शीघ्र ही यह चीन को पीछे छोड़ देगा। जनसंख्या भले ही बढ़े परन्तु संसाधन नहीं बढ़ रहे हैं इससे आपसी संघर्ष ने जन्म लिया है, परिणामतः भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता की भावना की कमी होती जा रही है।
- **अनावश्यक बाहरी हस्तक्षेप**– भारत बाहरी हस्तक्षेप के कारण भी अस्थिर है। हमारे देश के कई मसलो पर बाहरी देशों का अनावश्यक हस्तक्षेप है, जिसमें काश्मीर मुद्दा भी एक है, दूसरी ओर असम है तो एक ओर पश्चिमी बंगाल है। यहां तक भी देखने में आ जाता है कि भारत में रहकर लोग पाकिस्तान को या अन्य देशों को अपना मानते हैं यह राष्ट्रीयता के लिये घातक है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

8– जनसंख्या की अधिकता राष्ट्रीय एकता को कैसे प्रभावित करता है?

....

9– काश्मीर का मुद्दा न सुलझ पाने का मुख्य कारण क्या है?

....

14.8 भारत में राष्ट्रीयता के विकास के उपाय एवं शिक्षा

यह निस्संदेह सत्य है और आप भी जानते हैं कि भारत विभिन्नता का देश है, परन्तु इसके बाद भी हम इसे एक सफल लोकतंत्र के रूप में देख रहे हैं। यह एकता– भारतीय चरित्र और समान्य व्यक्तित्व की हैं। इसका आधार सांस्कषतिक एकता है। इसको विभिन्न तत्वों में विघटित करना कठिन है। इस एकता को इंगित करते हुये इतिहासकार स्मिथ ने लिखा है– *''भारत में निःसंदेह रूप में गहरे अधोभाग पर आश्रित आधारभूत एकता है।''* राष्ट्रीयता राष्ट्र का मूल तत्व है, इसके अभाव में देश जीवित नहीं रह सकता है। हमने अपने स्वतंत्रता की लड़ाई एक जुट, एक राष्ट्र बनकर लड़ी है, परन्तु आज इस राष्ट्र को एकजुट रखने में हमने कई कठिनाइयां महसूस हो रही है। भारत सरकार ने सभी परिस्थितियों का समाधान शिक्षा के माध्यम से करने का प्रयत्न किया और विघटनकारी तत्वों को दूर करने के लिये राष्ट्रीय एवं संवेगात्मक एकता की स्थापना के लिये दो समिति का गठन किया। डा0 राधाकष्णन ने स्पष्ट अक्षरों में लिखा कि– *''यदि हमें राष्ट्र के रूप में जीवित रहने की तनिक भी अभिलाषा है तो हमें राष्ट्रीयता की अनिवार्य आवश्यकता स्वीकार करना पड़ेगा।''*

जवाहर लाल नेहरू– ने स्वतंत्रता के साथ ही इस आवश्यकता को स्वीकार करते हुये यह संदेश पारित किया कि– *''हमें अपने देश की नवजात स्वतंत्रता को सबल बनाना और उसको सुरक्षित रखना अपना सर्वप्रथम कर्तव्य समझना चाहिये। यदि हम अपने समूह अपने राज्य, अपनी भाषा या अपनी जाति के समान किसी अन्य बात को महत्व देंगे तो अपने देश को भूल जायेंगे तो हमारा विनाश अवश्म्भावी है। इन सब शब्दों का हमारे जीवन मे उचित स्थान होना चाहिये । इन सब बातों को उचित स्थान ही दिया जाना चाहिय पर यदि हम सबको अपने देश से अधिक महत्व देंगे तो हमारे राष्ट्र का अन्त आवश्यक है।''* जवाहर लाल नेहरू ने इस तथ्य पर और जो देते हुये राष्ट्रीयता की आवश्यकता के लिये कहा था कि – *''अब निश्चित रूप से वह समय आ गया है जब प्रत्येक भारतीय को अपने अन्तर में देखना चाहिये और अपने आप से यह पूछना चाहिये कि वह राष्ट्र के साथ है, या किसी विशिष्ट समूह के। यह हमारे समय की चुनौती है, जिसका प्रत्येक नर–नारी और बच्चों को सामना करना है।''*

भारत सरकार द्वारा जो दो समितियां गठित हुई एक समिति की अध्यक्ष श्रीमती इन्दिरा गांधी और समिति के अध्यक्ष डा0 सम्पूर्णानन्द थे।

डा0 सम्पूर्णानन्द समिति के सुझाव– इस समिति ने यह स्पष्ट किया कि राष्ट्रीय एकता को उत्पन्न करने में ''शिक्षा'' ही महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है, और उन्होनें निम्न सुझाव दिये–

- शिक्षा द्वारा बालकों में उचित अभिरूचियों, दृष्टिकोणों और संवेगों का विकास कर उन्हें अपनी सांस्कृतिक विरासत की विशेषतायें एवं परम्पराये समझने के योग्य बनाना।
- इतिहास शिक्षण को पाठयक्रम में अनिवार्य कर दिया जाये, जिससे उपरोक्त लक्ष्य प्राप्त हो।
- योग्य शिक्षकों के द्वारा इतिहास शिक्षण की व्यवस्था की जाये।
- हिन्दु–मुस्लिम सांस्कषतिक विशेषतायें उनके सथापत्य व चित्रकला साहित्य आदि के क्षेत्रों में एकरूपता स्थापित करते हुये इतिहास शिक्षण हो।

राष्ट्रीय एकता सम्मेलन के सुझाव– राष्ट्रीय एकता सम्मेलन में राष्ट्रीय एकता प्राप्त करने हेतु सुझाव दिये हैं। सर्वप्रथम राष्ट्रीयता हेतु शिक्षा के उद्देश्य निध ार्रित किये गये जो निम्नवत थे–

- सभी विद्यार्थियों को देश के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान कराया जाय।
- विद्यार्थियों को स्वतंत्रता प्राप्ति के सभी तथ्यों को पढ़ाया जाये।
- राष्ट्रीय एकता के विकास के लिये सभी जातियों सम्प्रदायों और राज्यों में अध िक मेल उत्पन्न करने वाली पढ़ाई–लिखाई को प्रोत्साहित किया जाये।

राष्ट्रीय एकता हेतु कुछ सुझाव –

- स्कूलों एवं कालेजों में पढ़ायी जाने वाली पुस्तकों का पुनर्निमार्ण की जाये।
- सभी जातियों एवं धर्मों के व्यक्तियों द्वारा लोकप्रिय मेलों और त्यौहारो को प्रश्रय देकर सम्मिलित आयोजन किया जाये।
- साम्प्रदायिक समझ व सहिष्णुता उत्पन्न करने के लिये जनसम्पर्क आन्दोलन आरम्भ किया जाये।
- साम्प्रदायिक एकता के उत्पत्ति हेतु सांस्कषतिक कार्यक्रमों में इन्हें प्रश्रय दिया जाये।
- राष्ट्रीय एकता के प्रचार–प्रसार हेतु जनसंचार माध्यमों को अधिकाधिक प्रयोग किया जाये।
- साम्प्रदायिक सद्भाव हेतु संक्षिप्त चलचित्र बनायी जाये।
- नौकरियों में क्षेत्रीयता प्रान्तीय धर्म को महत्व न दिया जाये।

राष्ट्रीयता के विकास हेतु कोठारी आयोग के सुझाव

भारत में राष्ट्रीय एकता के लिये कोठारी कमीशन ने निम्नलिखित सुझाव दिये है–

- **समान स्कूल –** देश भर में समानता हेतु लोक शिक्षा के प्रणाली के रूप में समान स्कूल प्रणाली को कार्यान्वित किया जाना चाहिये।
- **सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा–** सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा सभी स्तरों पर विद्यार्थियों के लिये अनिवार्य बना दी जाये। यह सभी कार्यक्रम सैद्धान्तिक पाठ्यवस्तु में भी सम्मिलित हो।
- **भाषा नीति–** भारत में एक समुचित राष्ट्रीय भाषा नीति के विकास की आवश्यकता है, जिससे सामाजिक और राष्ट्रीय एकीकरण में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है।

राष्ट्रीयता हेतु केन्द्रीय प्रयास 1961 – सन् 10 अगस्त 1961 में तत्कालीन प्रधानमंत्री पं0 नेहरू की अध्यक्षता में राज्य के मुख्यमंत्रियों ने बैठक की यह बैठक दो दिनों तक चली पर इस बैठक में राष्ट्रीयता के विकास हेतु अनेक सुझाव आये उनमें से कुछ निम्न है–

- हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचार।
- सभी भारतीय भाषाओं की समान लिपि का प्रचार।
- अंग्रेजी की अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में मान्यता।
- त्रिभाषा सूत्र 1– प्रादेशिक एवं मातष्भाषा, 2– अहिन्दी क्षेत्रो में हिन्दी और हिन्दी क्षेत्रों में अन्य भारतीय भाषा 3– अंग्रेजी या अन्य अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की भाषा।

- हिन्दी व अंग्रेजी माध्यम में परीक्षा।
- उच्च शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी हो दीर्घकाल में हिन्दी।
- शिक्षा हेतु अच्छी पुस्तकों का निर्माण।
- राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति हेतु चौथा प्रयास सम्पूर्णानन्द द्वारा भावात्मक एकतासमिति 1961 द्वारा किया गया, जो कि आप ऊपर पढ़ चुके हैं।

14.9 राष्ट्रीय एकता हेतु शैक्षिक कार्यक्रम

शिक्षा को आधार बनाकर राष्ट्रीय एकता एवं भावात्मक एकता को प्राप्ति के प्रयास किये जाने चाहिये। और अनौपचारिक, औपचारिक व नौपचारिक शिक्षा तीनों माध्यमों का प्रयोग किया जाये।

हमारे शैक्षिक कार्यक्रम विभिन्न स्तर पर किस प्रकार से संगठित हो कि वह विद्यार्थियों में राष्ट्रीय एकता एवं भावात्मक एकता को प्रतिस्थापित कर सम्बंधित मूल्यों का विकास करे।

1– **प्राथमिक स्तर–** इस स्तर पर बच्चों का कोमल मन होता है, जिसमें राष्ट्र प्रेम को प्रफुल्लित करना आसान होगा अतः –

- पाठयक्रम में लोक गीत व स्थानीय देश से सम्बंधित कहानियां रखी जाये।
- महान व्यक्तियों के जीवन से परिचित कराया जाये।
- सामाजिक गुणों के विकास का प्रयास हो।
- अपने राष्ट्रीय प्रतीकों की जानकारी देकर राष्ट्रीयगान व राष्ट्रीय चिन्ह का पूर्ण ज्ञान कराया जाये।
- सभी राष्ट्रीय पर्व विद्यालय में मनाया जाये।

2– **माध्यमिक स्तर –** इस स्तर के विद्यार्थी प्राथमिक से जो देश प्रेम की भावना लेकर आये उन्हें विकसित किया जाना चाहिये।

- पाठ्यक्रम में सामाजिक व सांस्कषतिक इतिहास को सम्मिलित किया जाये।
- विद्यार्थियों को देश के विभिन्न क्षेत्रों की संस्कषति एवं सामाजिक दशाओं से परिचित कराया जाये।
- विद्यार्थियों के सामाजिक विकास हेतु पाठ्य सहगामी क्रियाओं को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाये।

3– **विश्वविद्यालय स्तर –** इस स्तर के विद्यार्थी समाज व देश के लिये तैयार मानव संसाधन है अतः इस स्तर पर राष्ट्रीय एकता व भावात्मक एकता स्थापित करने के

ठोस उपाय किये जाने की आवश्यकता है।

- सभी स्तर की कक्षाओं में विचार– गोष्ठियों और अध्ययन गोष्ठियों की व्यवस्था की जाये।
- इस स्तर पर भी राष्ट्रीय पर्वों को धूम–धाम से मनाने की व्यवस्था होनी चाहिये।
- राष्ट्र भाषा से सम्बंधित प्रतियोगिता (लेखन, वाद–विवावद, कविता) आदि का अयोजन कराया जाये।

4– युवा महोत्सवों का आयोजन कर विद्यार्थियों का सामाजिक, सांस्कषतिक एवं आध यात्मिक विकास का प्रयत्न करना चाहिये।

5– पाठ्यक्रम में सामुदायिक क्रियाकलापों को जोड़कर विद्यार्थियों को समाज के समीप लाने का प्रयास किया जाये।

6– राष्ट्र गौरव से सम्बंधित तथ्यों को पाठ्यक्रमों में जोड़ा जाये।

इन सभी उपायों को करके हम देश की रक्षा का उपाय कर सकते है, क्योंकि देश प्रेम की भावना को शिक्षा ही जगा सकती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी– क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

10–राष्ट्रीयता की शिक्षा किस स्तर पर सबसे अधिक आवश्यक है और क्यों?

....

14.10 सारांश

मनुष्य भावना प्रधान प्राणी है, और भावना के कारण ही वे एक–दूसरे से जुड़ते हैं। यही उनकी एकता एवं प्रेम का आधार बनता है। यही प्रेम और भाव राष्ट्र से होता है, तो वह राष्ट्रीय एकता को जन्म देता है। राष्ट्रीय एकता किसी भी राष्ट्र की प्राण वायु है, और इसके बगैर राष्ट्र के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती है क्योंकि राष्ट्र एक भाव सूत्र में बंधे लोगों का समूह ही तो है अतः इसको विकसित करने हेतु एक प्रकार से मस्तिष्क व मन को सुरक्षित किये जाने की आवश्यकता होगी इसके लिये शिक्षा को ही मुख्य भूमिका निभानी होगी। इस इकाई में हमने इन्हीं बातों को ध्यान देने की प्रयास किया है। यह इकाई आपके लिये रोचक एवं ज्ञान प्रद रही होगी।

14.11 चर्चा के बिन्दु

हमारे देश में ऐसे कई तत्व है, जिन्होनें राष्ट्रीय एकता को विघटित करने में सहायता दी है। क्या वास्तव में संवैधानिक प्रावधान भी एक मजबूत कारक है। चर्चा कीजिये।

14.12 अभ्यास कार्य

1— राष्ट्रीयकता के निहितार्थ पर प्रकाश डालिये? राष्ट्रीयता की शिक्षा के लिये हमे शिक्षा व्यवस्था में क्या परिवर्तन करना होगा ?

2— शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान का विकास एवं चरित्र का निर्माण ही नहीं है अपितु इसके द्वारा राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति भी करनी चाहिये। आप इस कथन से कहां तक सहमत है। राष्ट्रीय एकता के विकास हेतु विद्यालय के कार्यों की रूपरेखा तैयार कीजिये।

14.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1 देश के प्रति प्रेम भक्ति एवं समर्पण की भावना।

2 व्यक्ति को अपने देश से प्रेम व अन्य देश को खराब समझने, देशों के मध्य संघर्ष को जन्म देती है।

3 राष्ट्र की सीमाओं एवं अस्तित्व की रक्षा के लिये, विकास के लिये।

4 राष्ट्रों के मध्य सहयोग प्रेम, खत्म कर वैमनस्य को बढ़ाती है। नागरिक व्यक्तित्व की उपेक्षा होती है।

5 विभिन्न भाषा के होने के कारण मन नहीं मिलता। अपने भाषा को श्रेष्ठ मानकर दूसरी भाषा—भाषी को नीचा समझने से आपसी एकता समाप्त होती है।

6 भाषावाद, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, दूषित राजनीति।

7 शिक्षा नागरिक मस्तिष्क को शिक्षित कर धर्म—निरपेक्षता, समाजवादी दृष्टिकोण उत्पन्न कर राष्ट्र के प्रति लगाव उत्पन्न कर सकती है।

8 नाकारात्मक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि संसाधनों के न बढ़ने से आपसी संघर्ष होता है।

9 बाहरी देशों का हस्तक्षेप , कश्मीर निवासियों का पाकिस्तान के प्रति प्रेम, सरकार की उदासीनता।

10 उच्च शिक्षा स्तर पर, क्योंकि यह स्तर के विद्यार्थी देश के वर्तमान होते हैं।

14.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें–

डा0 जयसवाल एस0 (1996) : शिक्षा का सामाजिक आधार प्रकाशन केन्द्र, सीतापुर रोड,लखनऊ।

Saiyidian, G.K,(1957) : Education, Culture and Social Order, Bombay: Asia Publishing house.

Brookover W.V. : Sociology of Education, Newyork : American Book Co.

इकाई 15 शिक्षा और अन्तर्राष्ट्रीयता

संरचना

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 अन्तर्राष्ट्रीयता की अवधारणा

15.4 अन्तर्राष्ट्रीयता के बोध का औचित्य

15.5 अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना व शिक्षा

15.6 अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना हेतु शिक्षा के उद्देश्य

15.7 अन्तर्राष्ट्रीयता हेतु शैक्षिक स्वरूप

15.7.1 पाठ्यक्रम

15.7.2 शिक्षण विधियां

15.7.3 पाठ्य पुस्तकें

15.7.4 अन्य सुझाव

15.8 सारांश

15.9 चर्चा के बिन्दु

15.10 अभ्यास कार्य

15.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.12 कुछ उपयोगी पुस्तके

15.1 प्रस्तावना

मानव अकेले वन में रहने वाले प्रणी से एक समाज का प्राणी बना फिर देश का और अब विश्व का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है। अब मनुष्य को अपने से पहले देश के बारे में सोचना है और एक ऐसी विचारधारा ने जन्म लिया, जिसमें मनुष्य को अब सम्पूर्ण विश्व के विषय में भी उदारता पूर्वक सोचना है। आज विश्व में अन्धी राष्ट्रीयता से मानवता लगभग समाप्ति के कगार पर है, विश्व के दो महायुद्ध अंधी राष्ट्रीयता के ही परिणाम थे, जिसने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को हिलाकर रख दिया था, अतः आज भूमण्डलीकरण एवं औद्योगिकी करण के इस दौर में सम्पूर्ण मानव प्रजाति के अस्तित्व को बनाये रखने हेतु उदार राष्ट्रीयता की भावना की आवश्यकता महसूस हो रही है। पष्थकता पिछड़ेपन की द्योतक है दुनिया बदल गयी है और पुराने मान खत्म

हो रहे हैं अतः जीवन अन्तर्राष्ट्रीय होता जा रहा है। हमे भी इस भावी अन्तर्राष्ट्रीयता में अपनी भूमिका अदा करनी है और इस भूमिका को अदा करने योग्य हमें शिक्षा ही बना पायेगी अतः इस इकाई में हक अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध हेतु शिक्षा के विषय में अध्ययन करेंगें।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- अन्तर्राष्ट्रीयता की अवधारणा को समझ सके।
- अन्तर्राष्ट्रीय बोध की आवश्यकता की विवेचना कर सकेंगे।
- अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना के विकास में शिक्षा के कार्यो का वर्णन कर सकेंगे।
- अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना हेतु शिक्षा के उद्देश्यों को इंगित कर सकेंगे।
- यह बता सकेंगे कि अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास हेतु शिक्षा का क्या स्वरूप होना चाहिये।
- यह तर्क दे सकेंगे कि बच्चों में अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास हेतु कैसी पाठ्य पुस्तकें एवं शिक्षण विधियां शिक्षक को अपनानी चाहिये।

15.3 अन्तर्राष्ट्रीयता की अवधारणा

पूर्व इकाई में हमने मानव की स्वत्व से ऊपर उठकर राष्ट्र के प्रति सोचने अर्थात् राष्ट्रीयता के विषय में पढ़ा अर्थात् राष्ट्र के प्रति प्रेम, राष्ट्र के प्रति समर्पण व राष्ट्र के प्रति निष्ठा की भावना हेतु शिक्षा की भूमिका कों पढ़ा। इस इकाई में हम इस भावना से भी उदार एवं विस्तष्त भावना के विषय में जानेंगे।

जब दो या दो से अधिक व्यक्ति क्षेत्र, जाति, लिंग, धर्म, संस्कषति, व्यवसाय अथवा अन्य किसी आधार पर 'हम' की भावना से बंधे रहते हैं तो इसे भावात्मक एकता कहते हैं। मनुष्य आरम्भ से केवल अपने बारे में सोचता था धीरे–धीरे उसने दूसरो के विषय में सोचना प्रारम्भ किया जब समाज का निर्माण हुआ फिर एक निश्चित भू–भाग में रहने वाले लोग राजनैतिक विशेषताओं के कारण वर्गीकष्त होते गये और सम्पूर्ण भू–मण्डल देशों में बंट गया। ये सभी देश अपने नागरिकों के ''हम की भावना'' अर्थात् राष्ट्रीयता की भावना पर निर्भर करते हैं, क्योंकि इससे ही राष्ट्रों का अस्तित्व है। परन्तु जब राष्ट्रीयता से भावना ऊपर उठकर मनुष्य सम्पूर्ण विश्व के विषय में सोचता है प्रेम करता है, अपना सम्बंध जोड़ता है, तब मानसिक तौर पर राष्ट्र के बंधन टूट जाते हैं, तो यही भावना अन्तर्राष्ट्रीयता कहलाता है। यह भावना विश्व मैंत्री और विश्व बन्धुत्व की महान भावनाओं पर आधारित है। मानव मात्र का कल्याण हो, प्राणी मात्र पर समानता रहे, विश्व में शान्ति हो, प्राणीयों में सद्भावना हो, पारस्परिक मित्रता हो, राष्ट्रो

के मध्य भाईचारे का सम्बंध हो यही अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना है।

- एच0 लेबेज ने शिक्षा में अन्तर्राष्ट्रीय बोध को स्पष्ट करते हुये लिखा है– *''अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना एक ऐसी योग्यता है जो आलोचनात्मक रूप से सभी देशों के लोंगों के आचार–विचार का निरीक्षण करती है, तथा उन अच्छाइयों की जिनमें वे अपनी राष्ट्रीयता और संस्कषति का ध्यान नहीं रखते, दूसरों से प्रशंसा करती है।''* आगे उन्होनें इस बात को और स्पष्ट करते हुये कहा कि – ''अन्तर्राष्ट्रीय भावना इस ओर ध्यान दिये बिना कि व्यक्ति किस राष्ट्रीयता या संस्कषति के है एक–दूसरे के प्रति सब जगह उनके व्यवहार का आलोचनात्मक और निष्पक्ष रूप से निरीक्षण करने और आंकने की योग्यता है।''

  अर्थात् व्यक्ति अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम करते हुये भी दूसरे राष्ट्रों के प्रति भी प्रेम कर सकता है। यही सच्ची राष्ट्रीयता एवं अन्तर्राष्ट्रीयता है।

विशेषताये–

- यह भावना उदार एवं विस्तष्त होती है।
- इस भावना में उदार राष्ट्रीयता की भावना की झलक मिलती है।
- अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना मनुष्य को 'स्व' से बहुत उपर उठाती है, विश्व से जोड़ती है।
- यह भावना मनुष्य को मानवता के सर्वोत्कष्ट गुणों से परिपूर्ण बनाती है।
- यह विश्व शान्ति और विश्व विकास की ओर प्रमुख आधार प्रदान करती है।
- यह भावना सम्पूर्ण विश्व के प्राणियों को मानसिक रूप में बांधती है।
- यह भावना विश्व में प्राणी मात्र को मानसिक बंधन व संवेदना से बांधने का आध ाार है।
- यह भावना संघर्ष की समाप्त कर स्नेह और शान्ति का मार्ग प्रशस्त करती है।
- यह भावना मनुष्य को द्वेष, घष्णा, ईर्ष्या और असहयोग की निम्न भूमि से उठाकर प्रेम सहानुभूति और सहयोग की उच्च भूमि पर लाकर खड़ा करती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी– क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1– अन्तर्राष्ट्रीयता से तुम्हारा क्या अभिप्राय है? समझाइये।

....

15.4 वर्तमान में अन्तर्राष्ट्रीयता के बोध का औचित्य

अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना हमारे लिये नूतन भावना ही नहीं यह तो हमारे ध ार्म में पहले से है। धर्म ने ''वैसुधैव कुटुम्बकम'' का पहले ही मानव का आदर्श दृष्टिकोण के रूप में प्रतिस्थापित किया। आधुनिक युग उपनिवेशवाद ने मानवता को कुचलकर रख दिया। सम्पूर्ण विश्व कई भागों एवं गुटों में बंट और सबल देशों ने निर्बल एवं शान्त देशोंको अपना बाजार बनाया अपने अधीन किया और सम्पूर्ण विश्व धार्मिक क्रांतियों के चपेट में भी आ गया था। पुरातन धर्मों पर नये धर्मों ने अपने प्रचार के लिये पांव पसार लिया। औद्योगीकरण और भूमण्डलीकरण का प्रभाव सम्पूर्ण विश्व में स्वार्थपरता एवं बर्चस्व की होड़ लग गयी और इसके परिणामस्वरूप सम्पूर्ण विश्व सबल–निर्बल, रिपन्न, सम्पन्न, मालिक व नौकर के रूप में बंटा। 18वीं एवं 19वीं शताब्दी में सम्पूर्ण विश्व अशान्ति के आग में झुलस रहा था। अनेक देश भारत की तरह अपने स्वतंत्रता के लिये छटपटा रहे थे। इसी समय बर्चस्व की लड़ाई में दो विश्व युद्ध हुये और जन–धन की अपूर्णनीय क्षति हुयी। सम्पूर्ण विश्व अन्धी राष्ट्रीयता के चपेट में है विश्व के अधिकांश राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों की बलि देकर अपनी सुख समषृद्धि प्राप्त करने की इच्छा रखता है, और तीसरे महायुद्ध का सम्भावित संकट तथा आंतकवाद इसके परिणाम है।

धार्मिक कट्टरता एवं संकुचित राष्ट्रीयता का परित्याग कर अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास करके ही मानव का कल्याण हो सकता है।

इतिहास इस बात का गवाह है कि अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना के विकास हेतु बहुत लम्बे समय से प्रयास किया है आज से करीब 620 वर्ष पूर्व पियरे डयूबियस ने अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास के लिये अन्तर्राष्ट्रीय विद्यालयों को खोले जाने की संस्तुति की थी। कामेलियस ने इसी विचार को आगे बढ़ाया और अन्तर्राष्ट्रीय उपबोध के लिये पैनासोफिक कालेज खोले जाने की संस्तुति दी। अमेरिका में राष्ट्रपति टेफ्ट ने 1921 में हेग एक सम्मेलन इसी उद्‌देश्य को ध्यान में रखकर किया परन्तु यह उपाय बहुत कारगर नहीं रहा। इस बीच प्रथम विश्व युद्ध की विभिषिका विश्व झेल रहा था।

श्रीमती इन्ड्रूज ने अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा विभाग को राष्ट्र संघ में मिलाने का प्रयास किया। सन् 1926 में ''बौद्धिक सहयोग आयोग'' की स्थापना तो की गयी परन्तु ध नाभाव में यह प्रयास असफल रहा।

इस बीच में हिटलर के जर्मनी में जातिवाद व मुसोलिनी के इटली में फांसीवाद के सिद्धान्तों के प्रचार के कारण यूरोप पुनः द्वितीय विश्वयुद्ध की विभिषिका झेलने पर

मजबूर हुआ। इस युद्ध के समाप्ति पर सम्पूर्ण विश्व आतंकित हो गया शान्ति का उपाय ढूढना लगा और अपने विचारों को साकार रूप देने के लिये एक नये अन्तर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना की ओर कदम बढ़ाया। सन् 1945 में एक नये अन्तर्राष्ट्रीय संगठन ने ''संयुक्त राष्ट्र संघ'' के रूप में स्थापित हुआ।

इस संघ की स्थापना विश्व शान्ति के ध्येय से की गयी है, ओर अपने इस उद्देश्य को ''संयुक्त राष्ट्र संघ'' के अधिकार पत्र में कहा कि – ''अन्तर्राष्ट्रीय स्थिरता का विकास करने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक और शैक्षिक सहयोग को विकसित करेंगा।'' संयुक्त राष्ट्र संघ (यू0एन0ओ0) के प्रमुख संगठन यूनेस्को का आधारभूत सिद्धान्त यही है कि– *''क्योंकि युद्ध मनुष्यों के मस्तिष्क में आरम्भ होते हैं इसलिये शान्ति की सुरक्षा के साधनों का निर्माण भी मनुष्य के मस्तिष्क में ही किया जाना चाहिये।''*

- यूनेस्को यह बात मानता है कि राष्ट्रों के मध्य भेद का प्रमुख आधार– संस्कषति की विभिन्नता ही है। अतः शिक्षा विज्ञान और संस्कषति के क्षेत्रो में विविध राज्यों में सहयोग स्थापित करने व उनकी आपस की विभिन्नताओं तथा विरोध के कारणों को मिटाने के लिये यह बहुत आवश्यक है कि विश्व संस्कषति का विकास किया जाये।
- विश्व के प्रत्येक राष्ट्र की अपनी विशेषतायें एवं क्षमतायें हैं कुछ प्रकृति प्रदत्त है वो कुछ मानव निर्मित। कोई देश कपास पैदा करता है तो दूसरा देश कपड़ा अच्छा बनाता है, प्रत्येक देश एक–दूसरे पर कच्चा माल व बाजार के लिये निर्भर है। अन्तर्राष्ट्रीयता आर्थिक दृष्टिकोण से भी सहायक है।
- विश्व के राष्ट्रों के मध्य आर्थिक व शैक्षिक स्तर में विभिन्नता है। राष्ट्रों के मध्य अच्छी समझ सभी देशों को इन परिस्थितियों में उचित सहयोग प्रदान कर वहां के नागरिकों को विकास का अवसर देता है।
- के0जी0 सैयदेन ने एक उदारहण देते हुये लिखा था कि– *''युद्ध यूरोप में आरम्भ होता है, और बंगाल के तीन लाख व्यक्ति अकाल से मर जाते हैं, लाखों लोग बेघर हो जाते हैं, अपने साधारण कार्यों से पष्थक हो जाते हैं, और सभी सुख से वंचित हो जाते हैं।''* इसी प्रकार हम दूसरा उदाहरण देखे कि – अमेरिका के आर्थिक मंदी ने विश्व बाजार को हिलाया और भारत भी उससे प्रभावित हुआ इसका अभिप्राय यह है कि शिक्षा बालकों को यह सिखाये कि सब सम्पूर्ण विश्व एक है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

2. संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना के प्रमुख कारण क्या थे ?

....

15.5 अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना व शिक्षा

अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना के विकास के लिये रेडियो, समाचार–पत्र, भाषण, सिनेमा आदि अनेक साधन बताये जाते हैं, पर शिक्षा व्यवस्था की अहम भूमिका पर सभी मत एक है, क्योंकि शैक्षिक संस्थाओं का वैचारिक स्तर समाज के वैचारिक व तार्किक स्तर से ऊँचा होता है, इस तथ्य को यूनेस्को ने स्वीकार करते हुये ''टूवर्डस वर्ल्ड अण्डरस्टैण्डिग'' में लिखा है– *''शिक्षालय आसपास की संस्कृति में निहित सर्वोत्तम तत्वों को व्यक्त कर सकते हैं, और साधारणतः करते भी हैं। वे सत्य ईमानदारी और निष्पक्षता में समाज के सामान्य स्तर से ऊँचे होने चाहिये, और साधारणतः होते भी हैं। वे लोगों के मानदण्डों और मूल्यों को काफी ऊँचा उठाने का प्रयास करते हैं।''*

अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास का सिद्धान्त– शिक्षा में अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास का अर्थ है, शिक्षा के द्वारा संसार के सभी देशों के नागरिकों के मन में अन्य देशों के प्रति कल्याणकारी भावनाओं का विकास करना। शिक्षा का काम मात्र राष्ट्रीयता का विकास नहीं करती वरन् वह अन्य देशों के विषय में सकारात्मक सोच उत्पन्न करें। 1974 में यूनेस्को द्वारा **''अन्तर्राष्ट्रीयता के लिये शिक्षा''** नामक एक अभिलेख प्रकाशित किया गया। इसमें माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विषय को शिक्षा का माध्यम बनाने पर बल दिया। इस आधार पर 10 सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये–

- विद्यार्थियों को संसार की विभिन्न समस्याओं में रूचि लेने के लिये प्रोत्साहन दिया जाये।
- सामाजिक विषय के शिक्षण के माध्यम से विद्यार्थियों में आलोचनात्मक तर्कशक्ति का विकास किया जाये।
- विश्व के विभिनन देशों के संस्कषति एवं धार्मिक तथ्यों को सम्मिलित किये जाने का सिद्धान्त।
- सामाजिक विज्ञान विषय की उचित शिक्षण विधियों का प्रयोग करते हुये उचित मनोवृत्ति और कौशलों के विकास का सिद्धान्त।

- शिक्षण में मानव सम्बंधों को उचित महत्व का सिद्धान्त।
- प्रजाति धर्म और सांस्कषतिक, आर्थिक व उपलब्धि स्तर पर भेदभाव को दूर करते हुये सामाजिक विज्ञान के शिक्षण का सिद्धान्त।
- मानव के व्यक्तित्व का उचित विकास का सिद्धान्त।
- सामाजिक विज्ञान के अध्ययन हेतु नागरिकता की शिक्षा देने के लिये कक्षा स्कूल और समाज को प्रयोग के रूप में प्रयोगो करने का सिद्धान्त।
- सामाजिक घटनाओं, तनावों और सहकारिता से सम्बंध रखने वाली समस्याओं पर मुख्य ध्यानाकर्षण का सिद्धान्त।
- भूगोल शिक्षण के माध्यम से सम्बंधित समस्याओं पर ध्यान देने का सिद्धान्त।

उपरोक्त सभी सिद्धान्त यह इंगित कर रहे हैं कि व्यक्तित्व के सभी पक्षों को अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत एवं जागरूक किये जाने की आवश्यकता है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी– क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

3– यूनेस्को 'अन्तर्राष्ट्रीयता' के विकास हेतु किस विषय के शिक्षण पर बल देता है? और क्यों?

....

15.6 अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना हेतु शिक्षा के उद्देश्य

अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना हेतु शिक्षा के उद्देश्य निर्धारण हेतु हमें बहुत ही सावध ानी पूर्वक तय करने होंगे। हम अन्तर्राष्ट्रीय भावना हेतु शिक्षा के उद्देश्य इस रूप में निर्धारित कर सकते हैं–

- अन्तर्राष्ट्रीयता हेतु शिक्षा का बोध कराने वाली शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य मनुष्य के दृष्टिकोण को अधिक विकसित करना। इसका अभिप्राय यह है कि निजता ने मनुष्य के दृष्टिकोण को संकुचित बना दिया था, मानव के दृष्टिकोण को अपने और अपने राष्ट्र के बजाय सम्पूर्ण विश्व के विषय में सोचें।
- विश्व समाज के निर्माण हेतु सहायक मूल्यों और उद्देश्यों के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना।
- विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के प्रति गलत धारणाओं को दूर करना और ऊँचें भावों

का निर्माण करना ।

- विश्व के विभिन्न देशों के सांस्कृतिक विभिन्नताओं में मानव हित के लिये कल्याणकारी समान तत्वो को खोजने की योग्यता विकसित करना।
- विश्व के विभिन्न देशों की समस्याओं से परिचित कराते हुये बच्चों में उनके प्रति संवेदना जागृत करना और लोकतांत्रिक ढंग सुलझाने की योग्यता विकसित करना।
- सभी देश के नागरिकों में सध्दयता एवं प्रेम की भावना उत्पन्न करना जिससे युद्ध को रोककर उनसे विश्व की रक्षा करना।
- विश्व नागरिकता एवं मानव संस्कृति के विकास के लिये उनको सभी राष्ट्रों की उपलब्धियों एवं विशेषताओं से परिचित कराना।
- विश्व के विभिन्न देशो के आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक व संस्कृतियों की विशिष्टताओं से परिचित कराते हुये उनकी अन्योन्याश्रिता के कारणो से परिचित कराना।
- स्वतंत्रत विचार, निर्णय, भाषण व लेखन की क्षमता की विकसित करना।

यूनेस्को द्वारा प्रतिपादित उद्देश्य–

संयुक्त राष्ट्र संघ विश्व शान्ति के लिये समर्पित संस्था है, अतः उसके प्रमुख अंग यूनेस्को के भूतपूर्व डिप्टी डायरेक्टर जनरल, डा0 वल्टर,एच0सी0 लेब्ल द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास हेतु शिक्षा के निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये–

- विद्यार्थियों को समाज के सक्रियता पूर्ण निर्माण हेतु तैयार किया जाय।
- विश्व में साथ रहने हेतु आवश्यक गुणों एवं परिस्थितियों से परिचित कराया जाय।
- विद्यार्थियों को अपनी संस्कषति एवं राष्ट्रीयता के प्रति संकुचित दृष्टिकोण न रखकर उदारतापूर्ण दृष्टिकोण रखने हेतु प्रेरित करना।
- विद्यार्थियों को विभिन्न देश के लोगों की संस्कषति, सभ्यता, मूल्यों व अकांक्षाओं से परिचित कराना।
- विद्यार्थियों को विश्व के विभिन्न देश के व्यक्तियों के आपसी व्यवहार, आचार–विचार एवं क्रिया कलापों का आलोचनात्मक निरीक्षण हेतु अभियोग्यता विकसित करना।
- उनमें विभिन्न राष्ट्रों के संस्कषतियों और प्रजातियों के व्यक्तियों के प्रति संतुलित दृष्टिकोण उत्पन्न करना।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

4–शिक्षा विश्व शान्ति हेतु क्या भूमिका निभाती है ? समझाइये।

....

15.7 अन्तर्राष्ट्रीयता हेतु शैक्षिक स्वरूप

अन्तर्राष्ट्रीय अपबोध हेतु शिक्षा के उद्देश्यों का उल्लेख उपर किया गया है इन उद्देश्यो को ध्यान में शिक्षा के क्षेत्र में हमें इन परिवर्तनों की आवश्यकता होगी।

शिक्षा के पाठ्यक्रम में परिवर्तन– अन्तर्राष्ट्रीय अपबोध के लिये पाठ्यक्रम में सामाजिक विषय को सम्मिलित किया जाये।

- पाठ्यक्रम में ऐसे तथ्य सम्मिलित किये जाये जो कि अन्य देशों के विषय में सोचने का अवसर दे।
- पाठ्यक्रम विद्यार्थियों को व्यावहारिक बनाये।
- पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों भूगोल, नागरिकशास्त्र, इतिहास, अंग्रेजी आदि में दूसरे देशों के भौगोलिक, भौतिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक व भाषायिक विशेषताओं को पढ़ाया जाये जिससे कि दृष्टिकोण विकसित हो।
- पाठ्यक्रम में धार्मिक व नैतिक शिक्षा को प्रश्रय दिया जाये। अन्य धर्मों के अच्छे तथ्यों को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाये जिससे व धर्म सहिष्णुता उत्पन्न हो।
- पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों में मानवीय मूल्यों को समाहित कर विद्यार्थियों को मूल्यों से परचित कराया जाय जिससे कि मानव संघर्ष रूके।
- पाठ्यक्रम को अन्तर्राष्ट्रीय मॉगो एवं परस्थितियों के अनुसार परिवर्तित किया जाये।
- पाठ्यक्रम में पाठय सहगामी क्रिया कलापों, स्टाउट गाइड, राष्ट्रीय सेवा योजना एवं नेशलन कैडेट कॉफ्स आदि को सम्मिलित कर विद्यार्थियों का सामाजिक व सामुदायिक विकास का प्रयत्न किया जाना चाहिये।
- पाठ्यक्रम में विभिन्न राष्ट्रों की समस्याओं को सम्मिलित किया जाये और इस पर समूह चर्चा, वाद–विवाद एवं भाषण प्रतियोगिताओं को आयोजन कर विद्यार्थियों में जागरूकता उत्पन्न की जाये।

- विद्यार्थियों को दूसरे देशों के विद्यालयों व विद्यार्थियों से जन संचार माध्यमों के बल पर जोड़ा जाये।
- पाठ्यक्रम में अन्तर्राष्ट्रीय भाषा, कला, विश्व साहित्य को सम्मिलित किया जाये।

अन्तर्राष्ट्रीयता एवं शिक्षण विधियां– अन्तर्राष्ट्रीयता के शिक्षण हेतु विधियों का चुनाव करते समय हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि शिक्षण विधियां व्यावहारिक हो और उसे विद्यार्थियों को पर्याप्त सहभागिता हो। शिक्षण विधियां में लोकतांत्रिकता हो। शिक्षण विधियों में आलोचनात्मक सजगता एवं तर्कशक्ति बढ़े। विद्यार्थियों को केवल पुस्तकीय ज्ञान न देकर उदार ज्ञान की ओर उन्मुख करे।

- विषयों को समन्वित करके शिक्षण किया जाये।
- शिक्षण के दौरान उदाहरणों एवं दृष्टिान्तो को हमेशा विश्व के नये घटनाक्रमों को उदधृत करते हुये दिये जाये।
- विज्ञान जैसे विषयों के शिक्षण में भी उसके सामाजिक पक्ष पर बल दिया जाये।
- विज्ञान शिक्षण में यह तथ्य अवश्य सम्मिलित किया जाये कि विज्ञान मानव को सुखी करने के लिये है।
- सभी विषयों के शिक्षण में उसके सामाजिक और अन्तर्राष्ट्रीय पक्षों पर बल दिया जाये।
- विद्यार्थियों को सामूहिक रूप से एक दूसरे के साथ प्रोजेक्ट, सामुदायिक क्रिया कलाप आदि करवाये जायें।

पाठ्यपुस्तकें–

पाठ्यपुस्तकों में से संकुचित राष्ट्रीयता वाले तथ्यो को निकाल देना चाहिये–

- अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के नेताओं के जीवन चरित्र एवं घटनाओं विश्व साहित्य आदि को पाठ्य वस्तुओं में सम्मिलित किया जाये।
- सभी प्रकार की पाठ्यपुस्तकों में ऐसे तथ्य सम्मिलित किये जाये जो विद्यार्थियों में अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना उत्पन्न करें।

अन्य सुझाव – अन्तर्राष्ट्रीयता हेतु कुछ अन्य कार्यक्रम भी करवाये जा सकते है–

- विद्यार्थियों को पेन फ्रेण्डस एवं पत्र मित्र बनाने हेतु प्रोत्साहित करे।
- एक देश के विद्यार्थियों को दूसरे देश में अध्ययन हेतु अवसर प्रदान किये जाये।

- एक देश के शिक्षकों को दूसरे देश के शिक्षको के साथ अध्यापन का अवसर दिया जाये।
- वर्ष में राष्ट्रीय स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का सभी स्तर के शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के लिये आयोजन किया जाये जिससे कि शिक्षक एवं विद्यार्थियों के साथ अन्य देशों के शिक्षकों एवं विद्यार्थियों का सम्बंध बढ़े।
- जन संचार के माध्यमों का प्रयोग करके इस भावना के प्रचार–प्रसार का कार्य किया जाये जिसमें अन्य देशों की संस्कषति एवं जनजीवन की अच्छी बातें समाहित हो।
- विद्यार्थियों में संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तर्गत कार्य करने वाले ''यूनेस्को अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय'' '' विश्व स्वास्थ्य संगठन'' आदि में रूचि करायी जाये।
- विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को अन्य देशों में भ्रमण एवं शोध के अवसर प्रदान किये जाने चाहिये।

हमें संकुचित राष्ट्रीयता के आवरण से विश्व को बाहर कर अन्तर्राष्ट्रीयता का बोध कराना होगा जवाहर लाल नेहरू ने इस सम्बंध में कहा है– *''पष्थकता का अर्थ है, पिछड़े रहना और पतन। संसार बदल गया है और पुरानी रूकावटें समाप्त होती जा रही है। जीवन अधिक ही अधिक अन्तर्राष्ट्रीय होता जा रहा है। हमें इस भावी अन्तर्राष्ट्रीयता में अपना पार्ट करना है।''*

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

5–'पेन फ्रेण्डस' क्या होते हैं?

....

6–पाठ्य पुस्तकों में अंश राष्ट्रीयता के विकास हेतु क्या परिवर्तन करना चाहिये?

....

15.8 सारांश

आधुनिक युग में अन्तर्राष्ट्रीयता का महत्व अत्यधिक है। दो विश्वयुद्ध के विभिषिका से विश्व सहमा हुआ है, और अब शान्ति की ओर अग्रसर होना चाह रहा है।

औद्योगीकरण और भूमण्डलीकरण ने विश्व को और सिकोड़ दिया है और सभी को एक–दूसरे पर आश्रित कर आबद्ध किया है। सभी देश एक–दूसरे के समीप है कि एक देश में होने वाली घटना की प्रभाव सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित करती है और यह सब प्रतीत होने लगा है कि राष्ट्रीयता के उदार दृष्टि के साथ अन्तर्राष्ट्रीयता की आवश्यकता है और कोई भी देश संसार से कर नही रह सकता है। ऐसी स्थिति में मानव जाति की रक्षा एवं कल्याण के लिये आवश्यक है कि वह सम्पूर्ण विश्व में एक साथ मिलजुल कर रहे इस भावना के विकास का कार्य शिक्षा को करना होगा। इसके लिये शिक्षा के सम्पूर्ण प्रक्रिया एवं पक्ष में अमूल परिवर्तन की आवश्यकता होगी। इस सम्पूर्ण इकाई में हमने इस बात पर ध्यान केन्द्रित किया है कि अन्तर्राष्ट्रीय अपबोध हेतु शिक्षा का क्या स्वरूप होना चाहिये। यह इकाई आपके लिये रूचिकर एवं बोधगम्य होगी।

15.9 चर्चा के बिन्दु

अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध ही विश्व को तीसरे विश्वयुद्ध से बचा सकती है, और सभी देशों को अपने आने वाली पीढ़ी में इसके संस्थापन हेतु प्रयास करना चाहिये। चर्चा कीजियें।

15.10 अभ्यास कार्य

1– अन्तर्राष्ट्रीय अपबोध क्या है? क्या राष्ट्रीयता एवं अन्तर्राष्ट्रीयता के मध्य विरोध है। शिक्षा इस विरोध को समाप्त करके कैसे इसका विकास कर सकती है?

2– शिक्षा में अन्तर्राष्ट्रीयता से आप क्या समझते हैं, अन्तर्राष्ट्रीय अपबोध के विकास में शिक्षा कहां तक सफल हो सकती है।

15.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सम्पूर्ण विश्व से प्रेम, सहानुभूति व सम्बंध जोड़ने का भाव।
2. सम्पूर्ण विश्व को दो युद्ध की विभिषिका के पश्चात् शान्ति के सत्याथ्पन एवं तीसरे विश्व युद्ध से बचाने हेतु।
3. सामाजिक विषय के अध्ययन हेतु।
4. लोगों के विचारों में परिवर्तन कर उदार व्यापक एवं आधुनिक बनाती है।
5. पत्रों के माध्यम से दूर दराज के देशों के लोगों को मित्र बनाना।
6. अन्तर्राष्ट्रीयता से सम्बंधित तथ्य, विभिन्न देशों के संस्तुति एवं सभ्यता के अंशों को

विभिन्न धर्मों के अच्छे आदर्शों को पाठ्यपुस्तकों में समाहित किया जाये।

15.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

जायसवाल एस0 (1996) : शिक्षा के सामाजिक आधार, प्रकाशन केन्द्र, सीतापुर रोड, लखनऊ।

Holger R.Stub (1975) : The Sociology of Education, A source book III edition, the dorsey Press.

Saiyidian, G.K,(1957) : Education, Culture and Social Order, Bombay: Asia Publishing house.

Brookover W.V. : Sociology of Education, Newyork : American Book Co.

इकाई 16 शिक्षा और विज्ञान

संरचना

16.1 प्रस्तावना
16.2 उद्देश्य
16.3 विज्ञान की अवधारणा एवं औचित्य
16.4 विज्ञान की प्रवृत्ति की विशेषतायें
16.5 विज्ञान का दर्शन एवं समाजशास्त्र
16.6 शिक्षा में विज्ञान के प्रवर्तक
16.7 भारत सरकार की वैज्ञानिक नीति
16.8 1987 –88 में विज्ञान शिक्षा गुणात्मकता हेतु प्रयास
16.9 विज्ञान शिक्षा की समस्यायें
16.10 सारांश
16.11 चर्चा के बिन्दु
16.12 अभ्यास कार्य
16.13 बोध प्रश्नों के उत्तर
16.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

वर्तमान युग वैज्ञानिक युग है। विज्ञान की प्रगति 15वीं शताब्दी से हो रहा है, उसने मानव जीवन के प्रत्येक पहलुओं को प्रभावित किया है। वैज्ञानिक अनुसंधानों एवं आविष्कारों ने मानव जीवन को पूर्णतया बदल दिया। विज्ञान विभिन्न राष्ट्रों के मध्य विकास का आधार बना। विज्ञान ने विश्व को हर क्षेत्र में प्रभावित किया। जिस देश में विज्ञान के क्षेत्र में जितनी प्रगति की वह उतना ही विश्व पटल पर विकसित कहलाया। वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने शिक्षा को प्रभावित किया और भारत समेत सभी देशों ने शिक्षा में विज्ञान विषय को महत्वपूर्ण स्थान दिया और यह शिक्षा के समक्ष एक समस्या के रूप में भी है कि विज्ञान को शिक्षा व्यवस्था में कैसे समाहित करे, कि विद्यार्थियों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति उत्पन्न हो। इस इकाई में हम शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति के विषय में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

16.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- विज्ञान की अवधारणा एवं उत्पत्ति के औचित्य को समझा सकेंगे।

- विज्ञान की प्रकृति एवं प्रवृत्ति की विशेषताओं की विवेचना कर सकेंगे।
- विज्ञान के दर्शन व समाजशास्त्र का वर्णन कर सकेंगे।
- भारत सरकार द्वारा विद्यार्थियों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति I उत्पन्न करने हेतु किये गये प्रयासों का वर्णन कर सकेगें।
- विज्ञान विषय के प्रभावशाली शिक्षण में समस्याओं एवं उपायों की विवेचना कर सकेगें।

16.3 विज्ञान की अवधारणा एवं औचित्य

विज्ञान एक चिन्तन की प्रविधि है, नवीन ज्ञान अर्जित करने की विधि है। **'विज्ञान'** शब्द मे ंमूल शब्दं ज्ञान और **'वि'** उपसर्ग है इसका अभिप्राय है विशुद्ध ज्ञान, पूर्णतया जॉचा–परखा ज्ञान, तर्कसंगत ज्ञान। वर्तमान के प्रयोगवादी एवं यथार्थवादी युग में उस ज्ञान को प्रश्रय दिया जाने लगा जो कि वास्तविक जीवन के लिये उपयोगी हो। यही विज्ञान है जिसने मानव जीवन में एक क्रांति उत्पन्न कर दी जिसके फलस्वरूप व्यक्ति का आधुनिक जीवन पूर्णतया साहित्यिक शिक्षा के अपेक्षा व्यावहारिक जीवन में उपयोगी शिक्षा की ओर ध्यान देना प्रारम्भ किया और पाठ्यक्रम में वैज्ञानिक विषयों को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करने पर बल दिया जाने लगा। शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विशेष रूप में फली फूली। इस शताब्दी से ही विज्ञान के अध ययन एवं अध्यापन पर विशेष बल दिया जाने लगा। इस प्रवृत्ति के उन्नति का प्रमुख कारण है–

- यूरोप में अनेक वैज्ञानिक आविष्कारों ने जन्म लिया, इससे औद्योगिक क्रांति हुई, और इन आविष्कारों ने वर्षों से सैद्धान्तिक तथ्यों को व्यावहारिक रूप दिया और इनके सही या गलत होने का प्रमाण दिया इस विचार ने विज्ञान के प्रति लोगों का विश्वास बढ़ाया।
- सैद्धान्तिक और साहित्यिक शिक्षा के तथ्य व्यावहारिक जीवन के लिये उपयुक्त नहीं रह गये, और ये जीवन की वास्तविकता तैयारी कराने में असमर्थ रहे।
- विश्व के विभिन्न भागों में मानव ने कार्य कारण को ज्ञात करने हेतु प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया इसके फलस्वरूप रूढ़िवादिता, अज्ञानता और अन्धविश्वासों की उपेक्षा होने लगी। इस प्रकार वैज्ञानिक प्रयोगों ने मनुष्य को आकर्षित किया।
- विज्ञान की विभिन्न शाखाओं भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, ज्यातिशास्त्र, भूगर्भशास्त्र, शरीरशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र आदि ने भी अत्यधिक विकास कर सभी क्षेत्रों में लोगों को बनावटी धारणाओं को समाप्त कर वास्तविक तथ्यों को उजागर किया जिससे लोगों की रूचि बढ़ी।

- जीव विज्ञान के विकास का सिद्धान्त ने मानव को वैचारिक परिवर्तन की कगार पर लाकर खड़ा कर दिया।
- आदर्शवादी दर्शन के विचारकों ने भी शिक्षण एवं चिन्तन में वैज्ञानिक विधियों के समावेश पर बल दिया।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी– क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1–विश्व में वैज्ञानिक प्रवृत्ति का प्रसार कब हुआ और क्यों?

....

16.4 विज्ञान की प्रकृति एवं प्रवृत्ति की विशेषता

विद्यार्थियों में विज्ञान की प्रकृति को बोध के रूप में रखा गया है, और इस बोध को वैज्ञानिक साक्षरता मान लिया गया और अब व्यक्ति से यह आशा की जाती है, कि वह विज्ञान सम्बंधी समस्याओं पर उचित निर्णय लेने की क्षमता रखता हो।

इसमें शोध के लिये प्रश्न विकसित करना, आंकड़े, एकत्र करना, आंकड़ों का विश्लेषण करना व निष्कर्ष निकालना आदि प्रमुख है। विज्ञान की मुख्य विशेषताओं कोह म इस रूप में देख सकते हैं कि यह तर्क और प्रमाण पर आधारित ज्ञान का योग है। पालमुनरो ने लिखा–*''शिक्षा में आधुनिक वैज्ञानिक पृवत्ति की मुख्य विशेषतायें प्रायः ठीक वे ही है, जो इन्द्रिय–यथार्थवादी प्रवृत्ति की है। प्रथम– विषयवस्तु के महत्व पर बल तथा प्रकृति की घटनाओं का ज्ञान और द्वितीय–अध्ययन की आगमन विधि के अनुभवातीत महत्व को स्वीकार करना।''* वैज्ञानिक प्रवृत्ति की कुछ विशेषतायें और है–

- **पाठ्यक्रम में वैज्ञानिक विषयों को प्रमुखता,** वैज्ञानिक प्रवृत्ति के समर्थकों ने यह स्पष्ट कर दिया कि मानव जीवन में विज्ञान का महत्व अत्यधिक है। क्योंकि साहित्यिक शिक्षा मानव को भावी जीवन के लिये तैयार नहीं कर सकती है, क्योंकि ये सभी व्यावहारिक नहीं है। इस दृष्टि से उन्होने वैज्ञानिक विषयों शरीर विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, रसायन एवं भौतिक विज्ञान, भूगोल, गणित को पाठ्यक्रम में प्रमुखता से सम्मिलित करने की मांग की है।
- **विषय वस्तु पर बल–** विज्ञान में विषय वस्तु पर बल दिया जाता है। इस प्रवृत्ति ने विश्व के समक्ष यह प्रश्न रखा कि जिन विषयों की वास्तविक जीवन में उपयोगिता सिद्ध न हो उन्हें पाठ्यक्रम में रखने का क्या लाभ और ज्ञान की प्राप्ति व्यावहारिक विषयों से ही हो सकती है वर्तमान शिक्षा में सबसे बड़ा यक्ष प्रश्न यही है कि इसकी विषय वस्तु व्यावहारिक नहीं है।
- **शिक्षण की आगमन विधि पर बल–** विज्ञान शिक्षण की आगमन विधि पर

बल देता है क्योंकि यह विधि पूर्णतया मनोवैज्ञानिक है, जिसमें हम सरल से कठिन और ज्ञात से अज्ञात और स्थूल से सूक्ष्म की ओर ले जाती है, और उसमें आंकड़ों के एकत्रीकरण विश्लेषण, स्वयं कार्यशीलन तथा सत्यान्वेषण पर अधिक बल दिया जाता है, और सीखने वाले स्वयं निष्कर्ष निकलता है और प्रमाणों के साथ सीखता है।

- **सैद्धान्तिक व अव्यावहारिक शिक्षा का विरोध–** वैज्ञानिक प्रवृत्ति में सैद्धान्तिक और अव्यावहारिक शिक्षा का विरोध प्राप्त होता है, क्योंकि यह शिक्षा मानव को वास्तविक जीवन के लिये तैयार नहीं कर पाती है।
- **विज्ञान द्वारा प्रकृति का वास्तविक ज्ञान–** इन प्रवृत्ति ने यह विचार प्रतिपादित किया कि प्रकृति के रहस्यों को समझने के लिये प्रयोग एवं विश्लेषण ही सर्वोत्तम है विज्ञान ने प्रकृति के अनछुये रहस्यों के सन्निकट मनुष्य को पहुॅचाया है और विज्ञान ही प्राकृतिक तथ्यों को समझने का सर्वोत्तम आधार प्रदान करता है क्योंकि प्रयोग द्वारा सिद्ध प्रमाणों को बदला नहीं जा सकता है।
- **उदार शिक्षा–** वैज्ञानिक प्रवृत्ति उदार शिक्षा पर बल देता है। पाल मुनरो ने इस सम्बंध में लिखा कि–*''उदार शिक्षा वह है जो मनुष्य को अपने पेशे के लिये नागरिक के रूप में अपने जीवन के लिये और अपने जीवन की समस्त क्रियाओं को करने के योग्य बनाती है।''* इसका अभिप्राय यह है कि प्राचीन काल से चली आ रही उदार शिक्षा की अवधारणा अब बदल गयी है।
- **शिक्षण की नवीनतम विचारधाराओं के प्रतिरूचि–** वैज्ञानिक प्रवृत्ति के समर्थक यह मानते हैं कि ज्ञान की वर्षद्धि बहुत तेजी से हो रहा है और विज्ञान के क्षेत्र में लगभग 10 वर्ष में ही ज्ञान दोगुना हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में आज की शिक्षण विधियां कल असफल हो सकती हैं। अतः शिक्षक में नवीन ज्ञान के विचारधाराओं के प्रतिरूचि बनी रहनी चाहिये, और यही रूचि वे अपने विद्यार्थियों में भी जाग्रत करें।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

2. वैज्ञानिक प्रवृत्ति की आधारभूत व्यवस्था क्या है ?

....

3. शिक्षण में आगमन विधि क्या है ?

....

16.5 विज्ञान का दर्शन एवं समाजशास्त्र

विज्ञान का दर्शन–विज्ञान मूलतः कुछ मान्यताओं पूर्व धारणाओं तथा व्यवहार पर निर्भर करता है और यही मान्यतायें तथा व्यवहार मिलकर विज्ञान को दर्शन बनाते हैं।

1– प्राकृतिक रहस्यों को जानने हेतु प्रकृति के विषय में विज्ञान की मान्यतायें है– प्रकृति वास्तविक है, इसके क्रियाकलापों के मध्य कार्य एवं कारण का सिद्धान्त है, और प्रकृति को कुछ सीमा तक समझा जा सकता है।

2– इसी प्रकार वैज्ञाानिक खोज हेतु मान्यतायें है– बारम्बार दोहराते रहना, अच्छे और सही परिणाम की सम्भावना बनाये रखना, अनिश्य की स्थिति बनी रहती हैं।

3– विज्ञान की अपनी नैतिक मान्यतायें भी है–

- परिणाम अनुभवों पर आधारित होंगे।
- सोच मुक्त होनी चाहिये और इस सोच के साथ प्रयोग किये जाये।
- परिणामों में निष्पक्षता होनी चाहिये।
- यह परिणाम तब प्रासंगिक थे आज भी है।

4– विज्ञान का दर्शन कुछ प्रश्नों को लेकर चलता है–

- विज्ञान ने अन्य प्रकार की खोज से क्या अलग खोजा ?
- विज्ञान को खोज हेतु कौन सी प्रवृत्ति का प्रयोग करना चाहिये?
- वैज्ञानिक व्याख्या कहां तक दी जा सकेंगी जो कि संतोषप्रद है?
- वैज्ञानिक नियमों एवं सिद्धान्तों का संज्ञानात्मक स्तर क्या है?

विज्ञान का समाजशास्त्र– विज्ञान और समाज भी एक–दूसरे से सम्बंधित हैं। विज्ञान के हर खोज एवं आविष्कार ने मानव समूह को सुख दिया और जीवन को समर्षद्धि से परिपूर्ण बनाया। विज्ञान, पर्यावरण तथा दैनिक जीवन से जुड़ी हुई अनेक समस्यायें एक–दूसरे से जुड़ी है। विज्ञान ने कृषि , ऊर्जा, स्वास्थ्य एवं पोषण आदि सभी पक्षों को प्रभावित किया है। विज्ञान का प्रभाव इक्कीसवीं सदीं के नागरिकों को इस कदर प्रभावित किया है कि इसने वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी, साक्षरता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण व वैज्ञानिक अभिवषत्ति विकसित करना आवश्यक बना दिया। विज्ञान व समाज के सहसम्बंध को इस रूप में देखा जा सकता है–

- समाज की अनेक समस्यायें विज्ञान के प्रचार–प्रसार का ही परिणाम है, जैसे–

प्राकृतिक संसाधनों का दोहन, पर्यावरण प्रदूषण, जनसंख्या विस्फोट, शहरीकरण, औद्योगिकरण, विभिन्न भयानक संक्रमण, ड्रग्स इत्यादि।

- सभी समाज के विकास के आत्मनिर्भरता का मानक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी है। जिस समाज ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी को अधिक अपनाया और समझा वह उतना ही विकसित हुआ।
- विकास करने और विज्ञान के कारण उत्पन्न समस्याओं के लिये सम्बंधित समस्याओं के प्रति बोध और उन पर निर्णय के लिये समाज में वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी साक्षरता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण का निर्माण एवं वैज्ञानिक अभिवषत्ति का विकास आवश्यक है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का जन्म व विकास आम समाज के लिये ही हुआ अतः आम जनता के लिये यह आवश्यक है कि वह वैज्ञानिक तकनीकी समस्याओं से सम्बधित कारणों का निर्णय ले सके। प्रो0 डेनियल बेल ने स्पष्ट लिखा है कि *''कोई भी सामाजिक प्रणाली अन्तोगोत्वा उसको लोकाचार से परिभाषित होती है। ऐसे लोकाचार मूल्य उसके चिन्तन संस्कषति में होते हैं, और व्यवहार के मानक उनके चरित्र में। विज्ञान के लोकाचार पाश्च औद्योगिक समाज के उदीयमान लोकाचार है।''*

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

4. विज्ञान के दर्शन से आप क्या समझते है ?

   ....

5. विज्ञान का समाज से क्या सम्बन्ध है ?

   ....

16.6 शिक्षा में विज्ञान के प्रवर्तक

हम पूर्व में विज्ञान और समाज के सम्बंध को पढ़ चुके हैं, और अब हम यह पढेगें कि शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति के प्रथम प्रवर्तक हरबर्ट स्पेन्सर है, इनका जन्म 1820 में डर्बी नामक शहर में लन्दन में हुआ। इनके पिता एवं चाचा शिक्षक थे और पिता के विज्ञान के शिक्षक होने के कारण स्पेन्सर की रूचि विज्ञान में बढ़ी और उन्होनें गणित, विज्ञान, इंजीनियरिंग, प्रकृति अध्ययन, अर्थशास्त्र आदि विषयों का ज्ञान प्राप्त किया। हरबर्ट स्पेन्सर ने 1861 में लेखन कार्य किया और उनकी प्रमुख रचनायें है–

- वाट एजुकेशन इज मोस्ट वर्थ
- दि प्रिन्सिपल्स ऑफ एथिक्स
- इन्टलैक्चुअल एजुकेशन
- दि प्रिसिंपल्स ऑफ सोशियाजाली
- मोरल एजुकेशन
- मैने वर्सेज स्टेट
- फिजिकल एजुकेशन
- फैक्ट्स एण्ड कमेण्टस
- फर्स्ट प्रिसिंपल्स
- दि फर्स्ट प्रिंसिपल्स आफ बायोलाजी

स्पेन्सर के शैक्षिक विचार – स्पेन्सर के अनुसार–*''शिक्षा जीवन की तैयारी है।''*

- **शिक्षा के उद्देश्य के सम्बंध में** स्पेन्सर ने लिखा–''शिक्षा को पूर्ण जीवन के नियमों ढंगों से परिचित कराना चाहिये शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण कार्य– हमें जीवन के लिये इस प्रकार तैयार करना है कि हम उचित प्रकार का व्यवहार कर सकें और शरीर मन तथा आत्मा का सदुपयोग कर सकें। स्पेन्सर ने इस बात पर बल दिया कि हमें शिक्षा द्वारा पूर्ण जीवन के कार्य– आत्मरक्षा, जीविकोपार्जन, वंशवृद्धि एवं पालन–पोषण, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक तथा अवकाश के सदुपयोग सम्बंधित कार्यो कों करने के लिये तैयार करना चाहिये जिससे हम जीवन का वास्तविक आनन्द ले सकें।
- **पाठ्यक्रम**– स्पेन्सर ने पूर्ण जीवन की समस्त क्रियाओं को पॉच भागों में बांटा है– आत्मरक्षा की क्रिया के लिये शरीर विज्ञान व स्वास्थ्य विज्ञान, जीवन रक्षा के लिये भाषा गणित, भूगोल, पदार्थ विज्ञान, शिशु रक्षा के लिय गृहशास्त्र, शरीर विज्ञान व बालमनोविज्ञान, समाजरक्षा के लिये इतिहास, नागरिक शास्त्र व अर्थशास्त्र अवकाश सम्बंधी क्रियाओं के लिये साहित्य, संगीत, कविता एवं ललित कला रखने का सुझाव रखा।

शिक्षण की वैज्ञानिक विधि–स्पेन्सर ने शिक्षण विधि को रोचक बनाते हुये मानसिक विकास की स्वाभाविक प्रक्रिया को अपनाने का सुझाव दिया उन्होनें सरल से कठिन की ओर स्थूल से सूक्ष्म की ओर, ज्ञात से अज्ञात की ओर, अप्रत्यक्ष से प्रत्यक्ष की ओर, अनिश्चित से निश्चित व स्वशिक्षा पर बल दिया।

अनुशासन के सम्बंध में स्पेन्सर ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण को ही अपनाया है,

उनके अनुसार– *" बालक को अपने आचरण के अनिवार्य परिणामों तथा अवश्यम्भावी प्रतिक्रियाओं को भोगना चाहिये, जिनसे उसे लाभप्रद नियंत्रणों का अनुभव होता है, जो वस्तुतः उसके शारीरिक हित से भिन्न होते हैं।"*

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

6– स्पेन्सर सच्ची शिक्षा किसे मानते थे?

....

7– स्पेन्सर को वैज्ञानिक प्रवृत्ति का प्रवर्तक क्यो कहा गया?

....

16.7 भारत सरकार की वैज्ञानिक नीति

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय लम्बे अर्से से परतंत्र रहे भारत की अर्थव्यवस्था पूरी तरह से लड़खड़ा रही थी, तत्कालीन सरकार के समय सबसे बड़ी चुनौती देश को आत्मनिर्भर बनाने के साथ विकास की श्रेणी में खड़ा करना था। तब भारत सरकार न इसे सहर्ष स्वीकार किया और 4 मार्च 1958 को संविधान द्वारा स्वीकष्त विज्ञान नीति संकल्प पर आधारित है। इसमें वैज्ञानिक जानकारी तथा अनुसंधान के व्यावहारिक उपयोग से होने वाले लाभ को जनसामान्य को देने की सरकार की जिम्मेदारी को माना गया। सरकार की यह नीति है कि ज्ञान के प्रसार में व्यक्तिगत प्रयासों को बढ़ावा दिया जाये और यह तय किया गया कि विज्ञान शिक्षा, कृषि उद्योग तथा प्रतिरक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जाने चाहिये। सन् 1958 की राष्ट्रीय विज्ञान शिक्षा नीति के निम्नलिखित सुझाव थे–

- व्यावहारिक और सैद्धान्तिक दोनों स्तरों पर हर सम्भव विज्ञान की शिक्षा और वैज्ञानिक अनुसंधानों को विकसित किया जाये।
- वैज्ञानिकों के उच्च स्तरीय अनुसंधानों की प्रतियां सम्पूर्ण देश में उपलब्ध करायी जाये, जिससे कि देश समषद्धिशाली और शक्तिवान बने।
- देश में शिक्षा, विज्ञान, कृषि उद्योग और सुरक्षा की आवश्यकता पूरी करने के लिये वैज्ञानिक और तकनीकि प्रशिक्षण के कार्यक्रम बनाये जाये और इन पर द्रूत गति से कार्य किया जाये।
- यह सुनिश्चित करना कि रचनात्मक अभिवषत्ति रखने वाले लोगों को वैज्ञानिक खोजों के लिये अभिप्रेरित किया जाये।

- वैयक्तिक रूप से अपने ज्ञान व वैज्ञानिक खोजों के लिये लोगों को प्रोत्साहित किया जाये।

विद्यालयीय स्तर पर विज्ञान शिक्षण– स्वतंत्रता के साथ ही भारत ने विज्ञान शिक्षण के महत्व को स्वीकार कर लिया था। स्वतंत्रता से पूर्व भी राजा राममोहन राय और स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा में विज्ञान को समाहित किये जाने का प्रबल समर्थन किया था। प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर की शिक्षा में विज्ञान शिक्षण के पुनर्गठन और विस्तार के लिये सन् 1967 में भारत सरकार और यूनेस्को–यूनीसेफ के मध्य एक करार पर हस्ताक्षर किया गया। 1971 में राज्य सरकारों को यह निर्देशित किया गया कि वे नई अनुदेशनात्मक प्रणाली के परीक्षण हेतु प्रायोगिक कार्य आरम्भ करें। प्रायोगिक कार्य के इस योजना के अन्तर्गत जो धनराशि प्रदान की गयी वह प्रत्येक राज्य के 50 चुने हुये प्राथमिक तथा 30 जूनियर हाईस्कूलों को निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें तथा विज्ञान किटों की आपूर्ति तथा प्राप्त अनुभवों के आधार पर राज्य सरकारों द्वारा सम्मिलित किये गये स्कूलों के शिक्षणों के लिये सेवाकालीन प्रशिक्षण पर होने वाले व्यय तक ही सीमित थी। सभी राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में विज्ञान में प्रायोगिक कार्य का यह कार्यक्रम प्रारम्भ हो गया।

- इस कार्यक्रम में 100 शिक्षक प्रशिक्षण कालेज व 400 शिक्षक प्रशिक्षण स्कूलों के लिये विज्ञान, प्रयोगशाला, उपकरण व पुस्तकालय हेतु पुस्तकें दी गयी।
- 24000 स्कूलो ं और 31000 जूनियर हाईस्कूलों को विज्ञान किटों की आपूर्ति।
- 55000 शिक्षकों अर्थात् प्रतिस्कूल एक शिक्षक का प्रशिक्षण की व्यवस्था।
- प्रति राज्य एक पर्यवेक्षक वाहन की सुविधा।
- प्रति राज्य एक चलप्रयोगशाला वाहन की आपूर्ति।
- नई शिक्षण सामग्री के पुनर्मुद्रण के लिये कागज की आपूर्ति

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

8–भारत ने विज्ञान प्रचार–प्रसार पर ध्यान कब देना प्रारम्भ किया?

....

9– किन विचारकों ने विज्ञान शिक्षा पर जोर दिया?

....

10– विद्यालय स्तर पर विज्ञान शिक्षण हेतु क्या प्रारम्भ किये गयें?

....

16.8 1987–88 में विज्ञान शिक्षा में गुणात्मकता हेतु प्रयास –

सन् 1987–88 में केन्द्र सरकार की सहायता से स्कूल स्तर पर विज्ञान शिक्षा के सुधार की नई योजना प्रारम्भ किया। इसका उद्देश्य विभिन्न वय वर्ग के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति का विकास करना था। उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों को साधन सम्पन्न बनाने हेतु समष्द्ध प्रयोगशालायें प्रदान की गयी, पुस्तकालयों में पर्याप्त पुस्तकें प्रदान की गयी। विभिन्न राज्यों के प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विज्ञान किट उपलब्ध करायी गयी। जिले स्तर पर जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डायट) तथा ब्लाक स्तर पर ब्लाक संसाधन इकाई स्थापित की गयी। डायट का एक विभाग जिला संसाधन इकाई ने जिले भर के विद्यालयों विज्ञान शिक्षण में गुणात्मक सुधार हेतु प्रयास कार्य करना प्रारम्भ किया। आपरेशन ब्लैकबोर्ड योजना के तहत स्थापित विद्यालयों में विज्ञान व गणित किट प्रदान की गयी। जिला संसाधन इकाईयों ने विज्ञान एवं गणित में शिक्षकों को पुनर्बोधात्मक प्रशिक्षण भी प्रदान किया। विज्ञान एवं गणित से सम्बंधित प्रशिक्षण 2002 में संचालित सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत भी उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों को दिया गया। जिसको इस प्रकार से संगठित किया गया –

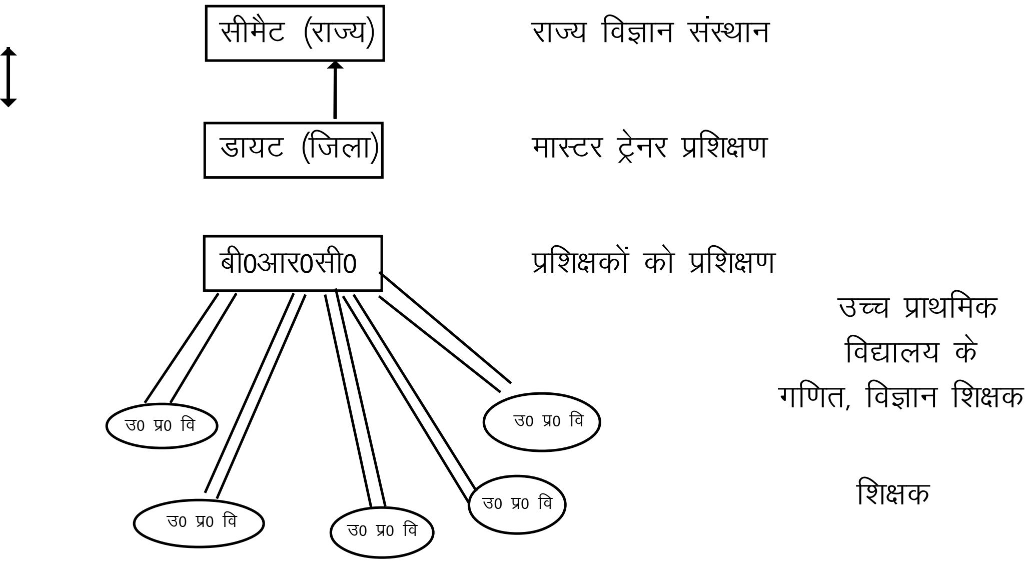

माध्यमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण– माध्यमिक स्तर पर भी वैज्ञानिक मनोवषत्ति, अनुशासन सोच उत्पन्न करने हेतु स्वतंत्रता के पश्चात् से पूरा ध्यान इस स्तर की शिक्षा पर लगाया गया। विभिन्न प्रकार के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में विज्ञान की विभिन्न शाखायें प्रचलित हुयी है, अभी और प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। पाठ्यक्रम में विज्ञान के व्यावहारिक शिक्षण एवं ज्ञान पर बल दिया जाना चाहिये।

उद्योगों एवं दैनिक जीवन में विज्ञान के प्रयोग तथा हमारी अर्थव्यवस्था में इसके बढ़ते कदम पर प्रकाश डाला जाना चाहिये। जीव विज्ञान के पाठ्यक्रमों पर भी ध्यान दिया जाये यह स्पष्ट किया जाये कि पुष्टिकरण प्रेक्षणों के द्वारा जॉच की एक पद्धति है जिसका परिमाणात्मक विश्लेषण किया जा सकता है।

उच्च माध्यमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण – उच्च माध्यमिक स्तर पर विज्ञान का शिक्षण अनिवार्य नहीं ऐच्छिक होना चाहिये। हमारे देश में भी इस स्तर पर विज्ञान विषय ऐच्छिक है, और विज्ञान विषय में रूचि एवं योग्यता रखने वाले विद्यार्थियों द्वारा ही इस स्तर पर विज्ञान को विषय के रूप में चयनित किया जाता हैं। आयोग इस स्तर के पाठ्यक्रम में लचीलेपन की सिफारिश करता है। ग्रामीण एवं शहरी माध्यमिक विद्यालयों में विज्ञान शिक्षण ग्रामीण क्षेत्रों के माध्यमिक विद्यालय में, कृषि पर्यावरण से शिक्षा का सम्बंध ऐसे समन्वित पाठ्यक्रमों के माध्यमों से स्थापित किया जाये। जिसमें भौतिक विज्ञान का जीवन विज्ञान पर पड़ने वाले प्रभाव स्पष्ट हो। माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में कृषि विज्ञान विषय के रूप में प्रतिष्ठित किया जाये। औद्योगिक क्षेत्रों के विद्यालयों में प्रायोगिक विज्ञान की तकनीकि तथा औद्योगिक पक्ष पर तथा औद्योगीकरण पर पड़ने वाले उसके प्रभाव पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये।

उच्च स्तर पर विज्ञान शिक्षा– उच्च स्तर में विज्ञान की कई शाखायें विशेषीकृत रूप में पाठ्यक्रम में सम्मिलित है पर उसमें गुणवत्ता की कमी है। उच्च स्तर की शिक्षा में सम्मिलित पाठ्यक्रम में नवीनता का अभाव है। इसका प्रमुख कारण भौतिक संसाधनों की कमी है। शोध कार्य भी राष्ट्रीय अकांक्षाओं के अनुरूप नहीं है।

आयोग के अनुसार विश्वविद्यालय स्तर पर विज्ञान शिक्षा के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों में सही दृष्टिकोण विकसित करने की जरूरत है। वर्तमान संदर्भ में यह आवश्यक है कि पाठ्यक्रम में पुनर्संगठन किया जाये। विज्ञान प्रयोगशालायें आधुनिकृत की जाये। राष्ट्रीय महत्व के अनुसंधानों को प्रोत्साहन दिया जाये।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51ए(एच) में नागरिकों को यह दायित्व दिया गया कि वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण मानववाद तथा जिज्ञासा एवं सुधार की भावना का विकास करे इसका यह भी उद्देश्य है कि विज्ञान हमारे सम्पूर्ण राष्ट्रीय जीवन तथा हमारी गतिविधियां के सभी क्षेत्र प्रविष्ट हो। संविधान के भावना को मूर्त रूप देने के सरकार एवं जनता द्वारा किये गये प्रयासों ने ही भारतीय वैज्ञानिकों ने तीसरा स्थान भारत को दिलाया है परन्तु भारत को अभी इस ओर विकास की आवश्यकता है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

11. आपरेशन ब्लैक बोर्ड योजनाा के तहत किस स्तर की शिक्षा में विज्ञान शिक्षण पर अत्यधिक ध्यान दिया गया ?

....

12. विज्ञान किट क्या होता है ?

....

16.9 विज्ञान शिक्षा की समस्यायें

विज्ञान शिक्षा की समस्यायें जिन्हें हम इस रूप में देखते हैं,

- शिक्षा संस्थाओं में निर्धारित विज्ञान के पाठ्यक्रम बहुत पुराने हैं, इनमें उपयोगिता का अभाव है। नवीन आविष्कारों एवं खोजों को समाहित किये जाने की आवश्यकता है।
- हमारे देश में प्रचार–प्रसार से विज्ञान शिक्षण का कार्य प्रारम्भ हुआ, पर माध्यमिक विद्यालयों में प्रयोगशालाओं में भौतिक संसाधनों एवं वातावरण की कमी है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में तो साक्षरता प्रतिशत ही अत्यल्प है, तो वैज्ञानिक सोच व अभिवषत्ति का उत्पन्न होना तो और भी कठिन है।
- विज्ञान विषय में सरस रोचक एवं बोधगम्य नवीन ज्ञान से परिपूर्ण पुस्तकों का अभाव है। पुस्तकों में परम्परात्मकता एवं पुरातनता है। पाठ्यपुस्तकें नवीन ज्ञान, जिज्ञासा अन्वेषण एवं कार्यशैली उत्पन्न करने में असमर्थ है।
- शिक्षकों में भी विज्ञान शिक्षण को लेकर रूचि व सजगता का अभाव है। अध्ययनों में यह पाया गया कि विज्ञान एवं गणित में पुनर्बोधात्मक प्रशिक्षण प्राप्त कर विज्ञान किटों को भी प्राप्त कर लेने के पश्चात् भी कक्षा शिक्षण में प्रयोग नहीं करते हैं। शिक्षण हेतु व्याख्यान की परम्परागत विधियों का ही प्रयोग में लाया जाता है।
- विज्ञान की शिक्षा मातष्भाषा में न दिये जाने के कारण भी यह विषय आम बच्चों के लिये बोधगम्य कम बन पा रहा है।

विज्ञान शिक्षा हेतु सुझाव–विज्ञान शिक्षा के प्रचार–प्रसार हेतु हमें कुछ कदम उठाने की आवश्यकता होगी–

- शिक्षा के सभी स्तरों पर विज्ञान शिक्षा को अनिवार्य कर दिया जाये।
- सभी स्तर की शिक्षा संस्थान में विज्ञान शिक्षकों को नियुक्त किया जाये।
- शिक्षण संस्थाओं में प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति की जाये।
- शिक्षकों को समय–समय पर पुनर्बोधात्मक प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिये।
- विज्ञान शिक्षा हेतु शिक्षा संस्थाओं को पर्याप्त भौतिक संसाधन प्रदान किये जाये।
- विज्ञान शिक्षा हेतु रूचि लेने व अच्छी उपलब्धि वाले विद्यार्थियों को छात्रवषत्ति व प्रोत्साहन दिया जाये।
- विज्ञान शिक्षा का आकादमिक वातावरण तैयार किया जाये ताकि वैज्ञानिकों, तकनीशियनों एवं कुशल कर्मचारियों की आवश्यकता की पूर्ति के लिये देश की जनशक्ति का सर्वश्रेष्ठ उपयोग किया जा सके।

विज्ञान शिक्षा हेतु कोठारी कमीशन का सुझाव–कोठारी कमीशन ने विज्ञान शिक्षा की प्रगति हेतु निम्न सुझाव दिया–

- विज्ञान व गणित के अध्ययन हेतु उच्च शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की जाये।
- प्रतिभाशाली शिक्षकों की नियुक्ति की जाये।
- अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय वैज्ञानिकों को देश में आमंत्रण दिया जायें।
- सभी स्तर के पाठ्यक्रम में संशोधन व परिवर्द्धन किया जाना चाहिये।
- सभी संस्थाओं की प्रयोगशालाओं एवं वातावरण में भौतिक संसाधनों की आपूर्ति करना होगा।
- विज्ञान शिक्षा के लिये ग्रीष्मकालीन संस्थान खोले जाये।
- प्रौद्योगिकी व विज्ञान को शिक्षा प्रणाली का आवश्यक अंग बनाया जाये।
- अच्छी विज्ञान पुस्तकों की रचना व भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया जाये।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के सुझाव–

- विज्ञान शिक्षा का सुदष्ढ़ीकरण करें वैज्ञानिक सोच अभिवषत्ति व सष्जनात्मकता हेतु प्रयास किया जाये।
- विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हर स्तर पर किया जाये।
- विद्यार्थियों में विज्ञान को दैनिक जीवन में उपयोग हेतु क्षमता विकसित किया जायें।
- विद्यार्थियों में स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग तथा जीवन की अन्य पहलुओं के साथ विज्ञान के सम्बंध को विकसित किया जाय।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख–इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

12. विज्ञान शिक्षा में गुणात्मकता हेतु क्या प्रयास किये जाने चाहियें ?

....

16.10 सारांश

आज का युग विज्ञान आधारित तकनीकी विकास का युग है, और कोई भी राष्ट्र इससे अछूता नहीं है। हमें अपनी अर्थव्यवस्था का स्वरूप बदलना है तो विज्ञान को सकारात्मक रूप में अपनाना होगा और विज्ञान और तकनीकी पर आधारित शिक्षा कृषि और औद्योगिक क्षेत्रों को आधुनिक स्वरूप प्रदान कर सकती है, तथा राष्ट्रीय विकास में सहायक हो सकती है। विश्व में तीसरी महाशक्ति बनने की ओर अग्रसर भारत को भी विज्ञान शिक्षा का उचित प्रबंध करना होगा। शिक्षा में विज्ञान व तकनीकि आधार हमारे अर्थव्यवस्था को विकसित बनाने हेतु आवश्यक है। विज्ञान शिक्षा को मानवीय सुख व विश्वशान्ति व विकास हेतु प्रदान की जानी चाहिये। विज्ञान शिक्षा का उद्‌देश्य मानवीय दृष्टिकोण का विकास होना चाहिये।

16.11 चर्चा के बिन्दु

भारत को अपने उच्च आध्यात्मिकता पर गर्व है हमें अपनी आध्यात्मिकता को सुरक्षित रखते हुये वैज्ञानिक प्रगति करनी है। कैसे? चर्चा कीजिये।

16.12 अभ्यास प्रश्न

1. स्वतंत्र भारत में तकनीकि व विज्ञान शिक्षा का विकास एवं वर्तमान स्थिति का वर्णन कीजिये।
2. भारत में विज्ञान शिक्षा की आवश्यकताओं की विवेचना कीजिये।

16.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. 19 वी शताब्दी में, आविष्कारों के कारण।
2. विषयवस्तु पर बल, व्यावहारिक ज्ञान, आगमन विधि, मनोवैज्ञानिक, नवीन विचार।
3. उदाहरण से सूत्र की ओर।
4. विज्ञान की मान्यतायें, धारणायें एवं विचार।

5. विज्ञान के हर खोज समाज के लिये है और सामाजिक प्रगति एवं अवनति का आधार।
6. जो जीवन के लियें तैयार करे।
7. सर्व प्रथम विज्ञान के विषयों को पाठ्यक्रम में मुख्य बनाने व पढाने पर जोर।
8. स्वतन्त्रता के पूर्व।
9. राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानन्द, प0 मदन मोहन मालवीय।
10. प्रोत्साहन, उचित वातावरण, समष्द्ध प्रयोगशालायें, व्यावाहारिक शिक्षण, प्रशिक्षित अध्यापक।
11. प्राथमिक स्तर की शिक्षा में ।
12. विज्ञान शिक्षण में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों सहित छोटा बाक्स।
13. विज्ञान को अनिवार्य रूप से सम्मिलित कर योग्य शिक्षकों की नियुक्ति, र्प्याप्त भौतिक संसाधन, छात्रवषत्ति।

16.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें–

सारश्वत एम एवं गौतमएस0एल0 (2007) : *भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामयिक समस्यायें,* आलोक प्रकाशन, लखनऊ, इलाहाबाद।

एन0सी0ई0आर0टी0 (2002) : *विद्यालयी शिक्षा के लिये राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000,* नई दिल्ली।

Schwab J.J. (1962) : *The teaching of science as inquiry*, Harvard University, Press.

Singh Hemlata (1990) : *Scientific Temper and Education*, New Delhi Commn wealth Publisher.

Hard Paul (Oct 2000) : *Sceince education for the 21st century school Science & Mathmatics* Vol. 100.

Sood JK (1982) : *Teaching and the nature of science teaching of science in Secondary Schools* New Delhi, NCERT.

The Royal Society (1925) : *The public understanding of science,* London